June
2026

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

तलबा व फ़ुज़ला-ए-मदारिस की ज़िम्मेदारियाँ

"आपका एक सिरा नुबूव्वत-ए-मुहम्मदी (स0अ0व0) से मिला हुआ है। यही आपके काम की नज़ाकत की वजह और आपकी अज़मत की दलील है। नुबूव्वत-ए-मुहम्मदी (स0अ0व0) से वाबस्तगी और इत्तिसाल जहां एक बहुत बड़ी खुशनसीबी और सरफ़राज़ी है, वहां एक अज़ीम ज़िम्मेदारी भी है। आपके पास हक़ाइक़ व अक़ाइद की सबसे बड़ी दौलत और सबसे अज़ीम सरमाया है। इस वाबस्तगी से आप पर चंद ज़िम्मेदारियां आइद होती हैं। आपमें ग़ैर मुतज़लज़ल यक़ीन और रासिख़ ईमान होना चाहिये। आपमें वह हौसला व हिम्मत होनी चाहिये कि सारी दुनिया मिलती हो तो उसके एक नुक्ते से भी दस्तबरदार होने के सवाल पर ग़ौर न कर सकें। आपके दिलों में उसकी हिमायत व नुसरत का जज़्बा मोजज़न होना चाहिये। आपका दिल उस बे बदल दौलत पर फ़ख़्र और शुक्र से लबरेज़ हो।"

(पा जा सुराग़-ए-ज़िन्दगी: 92)

मुफ़क्किर-ए-इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0)

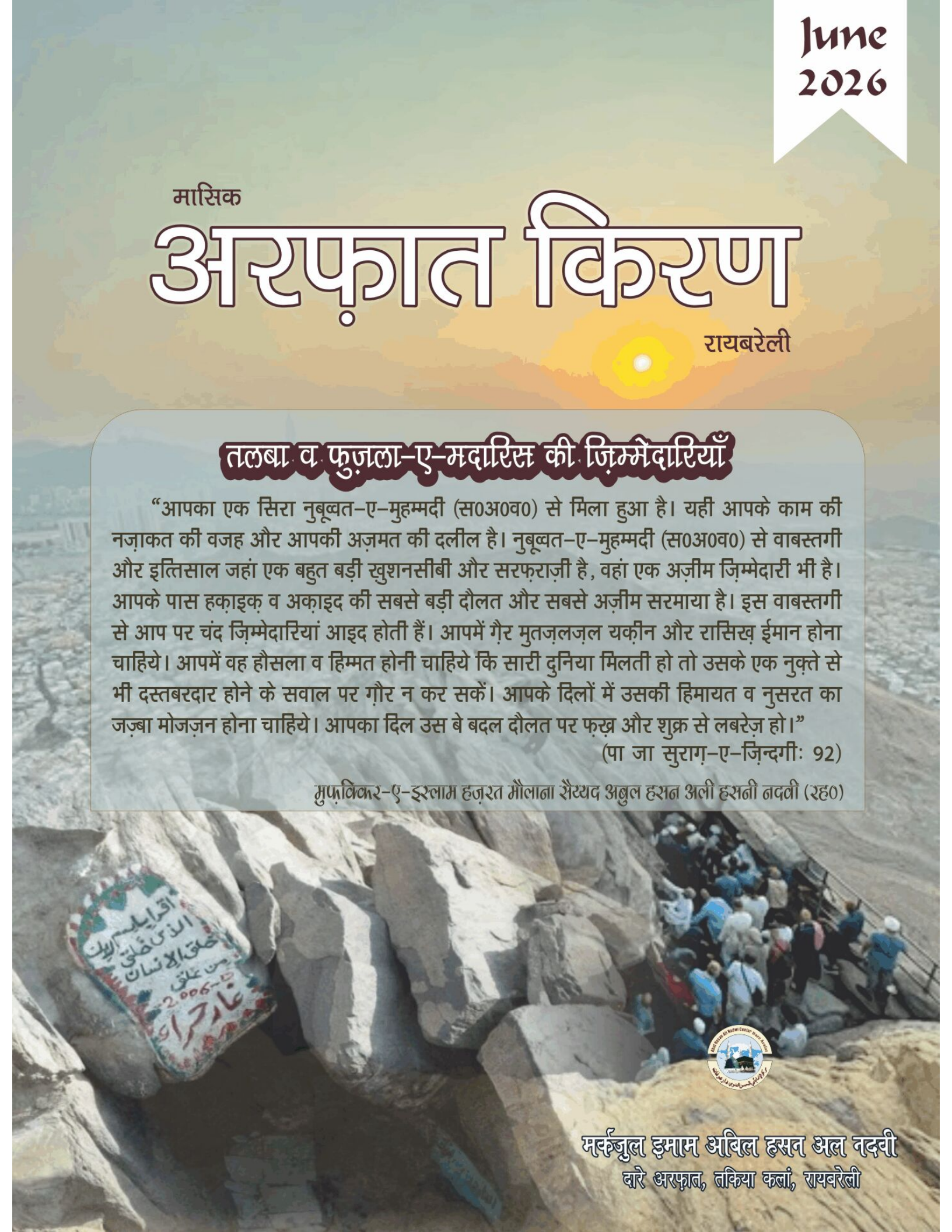

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

बिना समझ के जीवन अंधकार जैसा है

"इसमें कोई शक नहीं कि आज पूरा इंसानी समाज यूरोप के उस सरचश्मा–ए–हयात से बेज़ार, मायूस और उकता चुका है, जिसका तेल सूख चुका, जिसकी मुद्दत–ए–हयात पूरी हो गई, जिसका ज़माना गुज़र गया और जिसके सोते का पानी थम चुका। वास्तव में यूरोप का यह सरचश्मा अपनी हंगामा–खेज़ और हैरत–अंगेज़ तहज़ीबी व साइंसी तरक़्क़ी के बावजूद तोप व तुफ़ंग, गोला–बारूद, तबाहकुन बमों, ज़हरीली गैसों और हलाकत–आफ़रीं आलात व वसाइल के अलावा इंसानियत को कुछ न दे सका। इस पर तरफ़ा तमाशा यह कि इसी के साथ एक ऐसा ज़मीर भी परवान चढ़ा जो जुर्म से मानूस, सरकशी व बग़ावत का ख़ूगर और गुनाह व बे–हयाई के कामों की तरफ़ शदीद मैलान और हद दर्जा रग़बत रखने वाला है। यह यूरोप का परवरदा वह ज़मीर है जिसके नज़दीक ज़ाती मुनाफ़े से बढ़कर कोई हक़ीक़त नहीं, वह मुस्तकबिल के मुक़ाबले में फ़ौरी फ़ायदे को तरजीह देता है। यहाँ तक कि वह तहज़ीब व सक़ाफ़त और वह फ़ुनून–ए–लतीफ़ा, जिसकी दास्तान हम इस तरह पढ़ते हैं जैसे वह कोई जन्नत–ए–अर्ज़ी हो, या Sir Thomas More की ख़्याली दुनिया (UTOPIA) की दिलफ़रेब हिकायत, जहाँ आज़ादी, उख़ुव्वत, दोस्ती, अमानत व दियानत, ईफ़ाए–अहद और रोज़मर्रा ज़िंदगी की पाकीज़गी व शराफ़त के हसीन नक़्शे दिखाए जाते हैं, हक़ीक़त में अहल–ए–मग़रिब के यह सब बुलंद–ओ–बांग दावे आला अख़्लाक़ी मक़ासिद या इंसानी हमदर्दी का नतीजा नहीं बल्कि महज़ "मफ़ाद–परस्ती" के उसूल के ताबे हैं।

किसी मर्द–ए–दाना ने ख़ूब कहा है कि यूरोपियन फ़र्द अगर रोज़ा भी रखता है तो इस लिए नहीं कि उसकी रूह में बालिदगी पैदा हो और उसके बातिन में नूर व सफ़ा की किरनें फूटें, बल्कि उसमें भी यह मक़सद होता है कि उसकी ख़्वाहिशात–ए–नफ़्स और ज़्यादा तेज़ हो और उसके खाने–पीने की लज़्ज़त में इज़ाफ़ा हो। इसी तरह वह अपनी क़ौम के अफ़राद की तालीम व तरबियत का बंदोबस्त करता है, उन्हें मुहज़्ज़ब और बाख़बर बनाता है, लेकिन इस ग़र्ज़ से नहीं कि वह इंसानियत के लिए एक नमूना और दुनिया के लिए रहबर व पेशवा बनें, बल्कि इसमें भी यह नियत कारफ़रमा होती है कि वह आगे चलकर किस तरह दुनिया की दूसरी क़ौमों और जमाअतों को अपना ग़ुलाम बनाएँगे, किस तरह इंसानी हुक़ूक़ को निगल सकेंगे, किस तरह दूसरे मज़ाहिब के मुक़द्दसात को पामाल कर सकेंगे और दुनिया की मंडियों पर अपना क़ब्ज़ा जमाने के ज़्यादा अहल हो सकेंगे?! खुलासा यह कि रू–ए–ज़मीन पर अपनी बालादस्ती और फ़साद मचाने के सिवा उनकी कोई दूसरी ग़र्ज़ व ग़ायत नहीं है।

आप ग़ौर कीजिए कि एक मग़रिबी शख़्स अगर किसी आदमी से मुलाक़ात का वक़्त तय कर ले तो वह अपने वादे में इस दर्जा पाबंद होता है कि एक लम्हा की भी ताख़ीर उसे गवारा नहीं होती, लेकिन वही शख़्स फ़िलिस्तीन और उन मशरिक़ी ममालिक में जहाँ से उसके ख़ून और रंग–ओ–नस्ल का कोई तअल्लुक़ नहीं, खुले बंदों बेशर्मी के साथ झूठ बोलता है और इंसानियत के साथ धोखाधड़ी और फ़रेबकारी से काम लेता है। इसी तरह अपने वतन में वह एक Penny (पाई) की चोरी से भी बाज़ रहता है, लेकिन मशरिक़ में वही इंसान एक ग़ासिब और लुटेरा बनकर दनदनाता फिरता है, यहाँ तक कि वह अपने मक़ासिद की तकमील के लिए जिल्लत व पस्ती की हर हद से गुज़र जाता है। हासिल यह कि मग़रिबी तहज़ीब आज सर–ए–बाज़ार रुसवा हो चुकी है और उसके उयूब व मफ़ासिद रोज़–ए–रोशन की तरह अयाँ हो गए हैं। इसका नतीजा यह है कि पूरी दुनिया के हालात ने आलम–ए–इस्लाम को हाथ पकड़कर एक नाज़ुक दोराहे और एक संगीन इम्तिहान की शाह–राह पर ला खड़ा किया है।"

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद-अल-हसनी (रह०)

بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:06 जून २०२६ ई० वर्ष:18

सम्पादकीय मण्डल

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

मुहम्मद हसन नदवी

सह सम्पादक

मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

अनुवादक

मुहम्मद सैफ़

इल्म-ए-नाफ़ेअ की तलक़ीन

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

"अल्लाह से इल्म-ए-नाफ़ेअ की दुआ किया करो और अल्लाह की पनाह मांगा करो ऐसे इल्म से जो नफ़ा बख़्श न हो।"

सुनन इब्ने माजा: 3975

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खॉ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

हुस्न-ए-सरापा

मौलाना मुहम्मद सानी हसनी (रह0)

आशिक़ हूँ दिल-ओ-जान से रसूल-ए-अरबी का
मक्की मदनी हाशमी मुत्तालबी का
ऐ पाक नबी! तेरी नज़र नूर-ए-सहर है
काफूर हुआ जिससे फुसूं तीरा शबी का
आंखों में सभी के है तेरा हुस्न-ए-सरापा
है ज़िक्र ज़बानों पे तेरी खुश लक़बी का
दुनिया में तेरे नाम का शोहरा है हरएक सिम्त
हर एक है शाहिद तेरी आला नसबी का
हर ज़र्रा तेरी ख़ाक़-ए-कुफ्फ़-ए-पा का गहर है
आक़ा है तू ही हर अजमी का अरबी का
करता हूं तेरी ज़ात पे मैं जान का क़ुर्बा
है तुझपे फ़िदा दिल मेरी अम्मी व अब्बी का
मिल जाए मुझे कौसर-ओ-तस्नीम का साग़र
साक़ी से तक़ाज़ा है मेरी तिश्ना लबी का
है तू ही तबीब दिल-ए-बीमार-ओ-हरासां
आया हूं लिये शौक़ में दरमा तलबी का
मिलता है तेरे दर पे बिलाल-ए-हब्शी को
क्या काम तेरे दर पे किसी बू लहबी का
गुस्ताख़-ए-ज़बां, जो भी हो ख़ामोश रहे वो
हो नास तेरी शान में हर बेअदबी का
मस्कन है तेरा पाक से पाकीज़ा मदीना
क्या कहना उस शहर की शीरीं रुतबी का
जिस शहर का हर गुन्चा-ओ-गुल रश्क-ए-चमन है
है दर्जा बुलन्द उसके ज़न-ओ-मर्द-ए-वरुबी का

इस अंक में:

इल्म-ए-नाफ़ेअ की ज़रूरत.....3
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) का क़िस्सा.....4
हज़रत मौलाना सैय्यद जाफ़र मसऊद हसनी नदवी (रह0)

तक़वा क्या है?.....6
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

इद्दत के एहकाम.....8
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

इस्राईल की मुजरिमाना साज़िश 10
सैय्यद मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

इल्हाद का तूफ़ान – असबाब व इलाज.....12
मोहम्मद नज्मुद्दीन नदवी

दुनिया व आख़िरत की निजात की राज़.....15
मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

मर्द-ए-मोमिन-दरबार-ए-क़िसरा में.....17
मुहम्मद मुसअब नदवी

आसान दीन मुश्किल ज़िन्दगी.....19
मुहम्मद अरमग़ान बदायूनी नदवी

सम्पादकीय

इल्म-ए-नाफ़ेअ की ज़रूरत

● बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

इस वक्त तालीम की बड़ी नज़ाकतें हैं, चाहे वह किसी भी हैसियत से हों, हमारे मदारिस में हों, या स्कूल्स व कॉलेजेस और यूनिवर्सिटीयों में हों, तालीम का मसला इस वक्त हम सब के लिए एक लम्हा–ए–फ़िक्रया है। आप सब जानते हैं कि समाज तालीम से ही बनता है, अगर तालीम का रुख सही है तो समाज सही रुख पर चलता है और अगर तालीम का रुख सही नहीं है तो फिर समाज बजाय इंसानों के जानवर पैदा करता है। हज़रत मौलाना अली मियां नदवी (रह0) यह बात फ़रमाते थे कि आज की तालीम के नतीजे में ऐसा महसूस होता है कि यूनिवर्सिटीयों से इंसानों के बजाए जानवरों के रेवड़ तैयार हो रहे हैं।

मौजूदा सूरत–ए–हाल में यह बात कही जा सकती है कि आज जिहालत पढ़–लिख गई है, एक ज़माना जाहिलियत का था जिसमें इंसान बिल्कुल दरिंदों की तरह था, इसकी तफ़सील में जाने का यह मौक़ा नहीं, लेकिन अल्लाह के नबी (स0अ0व0) की बेअसत के बाद दुनिया में एक बहार आ गई, मुसलमानों ने इल्म को एक नया रुख दिया और इसकी सरपरस्ती की। इसका नतीजा यह हुआ कि दुनिया में इल्म की एक बहार नज़र आने लगी और हर हैसियत से इल्मी तरक्क़ी हुई। इस सिलसिले में मुसलमानों को यह इम्तियाज़ हासिल है कि उन्होंने कभी भी इल्म में तक़सीम (तफ़रीक़) नहीं की और उन्होंने हर हैसियत से इल्म–ए–नाफ़े को आगे बढ़ाने की कोशिश की, जिसके नतीजे में यह दुनिया गोया जन्नत बन गई।

लेकिन जब दुनिया में इल्म के अंदर तफ़रीक़ का उसूल इख़्तियार कर लिया गया और मुसलमानों में एक इंतिशार बरपा हुआ तो इसके नतीजे में पूरी दुनिया के हालात बदलने लगे। इसमें सबसे बड़ा मसला यह पेश आया कि इल्म का जो राब्ता 'इस्म–ए–रब' और इस्लाम के अख़्लाक़ी निज़ाम के साथ था, वह ऐसा कटा कि उसके बाद जो इल्म आया, उसने इंसानों को जानवर और खुदग़र्ज़ बना दिया। आज दुनिया में जो इल्म सिखाया जाता है, वह इल्म ख़ालिस माशी (आर्थिक) फ़ायदे के लिए सिखाया जाता है, अब इसका तसव्वुर तक़रीबन ख़त्म हो गया कि दुनिया को फ़ायदा पहुंचाने के लिए कोई इल्म हासिल किया जाए। आदमी सिर्फ़ अपने मफ़ाद (स्वार्थ) के लिए इल्म हासिल करता है, हालांकि यह इल्म हक़ीक़त में दुनिया को सही रुख देने के लिए है, इसके ज़रिए उन फ़वाइद (फ़ायदों) को हासिल करना चाहिए जो इस दुनिया और इंसानियत की ज़रूरत हैं, फिर सबसे बढ़कर आख़िरत की कामयाबी का रास्ता भी हमें इसी इल्म से हासिल होता है।

इल्म की ग़लत तक़सीम इस वक्त का सबसे बड़ा मसला है और इसका नतीजा यह है कि आज इंसान इंसान का दुश्मन है, क़ौमें क़ौमों की दुश्मन हैं और मुल्क मुल्क के दुश्मन हैं। आज आपको कहीं भी इंसानियत नज़र नहीं आएगी। आप इस मुल्क को ले लीजिए जिसको कहा जाता था कि यह प्यार व मोहब्बत का मुल्क है, आज यहां की हालत यह है कि यहां खुदग़र्ज़ी इस हद तक बढ़ चुकी है कि लाशों पर सियासत होती है, कितनी ही जानें चली जाएं मगर हमारा फ़ायदा होना चाहिए।

इन हालात में हमारे मदारिस–ए–इस्लामिया, हमारे उलेमा और दीन का काम करने वालों की ज़िम्मेदारी है, वह यह तय करें कि इल्म को नाफ़ेइयत (उपयोगिता/फ़ायदेमंद होने) के साथ जोड़ना है, वह नाफ़ेइयत दुनिया की हो और आख़िरत की भी, लेकिन खुदग़र्ज़ी न हो। ऐसा न हो कि हमें सिर्फ़ अपना फ़ायदा नज़र आए, हमें सिर्फ़ यह नज़र आए कि हमारी तनख़्वाह कहां ज़्यादा होगी? हमें पैसा कहां ज़्यादा मिलेगा? ज़ाहिर है यह इल्म का रास्ता नहीं है, यह जहालत का रास्ता है। इल्म का रास्ता जब होगा जब हम यह देखें कि दूसरों को फ़ायदा कैसे होगा, हम वह बेहतर चीज़ें भी ईजाद (आविष्कार) करें जो लोगों के नफ़ा की हों।

आज यूरोप ने अपने इन्किशाफ़ात (खोजों) से दुनिया को फ़ायदा भी पहुंचाया और हज़ार ख़राबियों के बावजूद आज यूरोप की जो बालादस्ती (प्रभुत्व) है, मैं साफ़ कहता हूं कि उसमें बड़ा हिस्सा नाफ़ेईयत का है। इस इल्म के अंदर उसने जो नाफ़ेईयत पैदा की, उससे दुनिया फ़ायदा उठा रही है, अल्लाह ने दुनिया के लिए उन्हें बाक़ी रखा है। अगर उनके अंदर यह नाफ़ेईयत न होती तो उनका नाम व निशान मिटा दिया जाता, उनके अंदर जो ज़ुल्म व सितम है और जो हज़ार ख़राबियां हैं वह ऐसी थीं कि उनका नाम व निशान तक बाक़ी न रहता, लेकिन नाफ़ेईयत एक ऐसा जौहर है कि आज भी वह बाक़ी हैं। आज ज़रूरत इसी बात की है कि हम भी अपने अंदर यह नाफ़ेईयत पैदा करें और इंसानियत के काम आएं।

हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) का क़िस्सा

हज़रत मौलाना सैय्यद जाफ़र मसऊद हसनी नदवी (रह०)

हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) अज़ीज़–ए–मिस्र के घर पहुँचे। धीरे–धीरे उम्र बढ़ रही थी। जब जवानी के मरहले में आए तो दूसरी आज़माइश आ पहुँची। सब्र का एक दूसरा इम्तिहान शुरू हुआ। वहाँ मिस्र की मलिका हज़रत यूसुफ के हुस्न से इतनी प्रभावित हुई कि उसने उनको बहकाने–फुसलाने की सारी तदबीरें इख़्तियार कर लीं। हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) के लिए बड़ा अच्छा मौका था। अगर उस वक़्त मलिका की बात मान लेते तो उनको सब कुछ मिल जाता। यह कितना सख़्त इम्तिहान था, हम और आप इसका अंदाज़ा नहीं लगा सकते।

हमको ज़रा–सी दौलत मिलती है तो बहक जाते हैं, ओहदा मिलता है तो बहक जाते हैं, मंसब मिलता है तो बहक जाते हैं, कुर्सी मिलती है तो बहक जाते हैं, इज़्ज़त मिलती है तो बहक जाते हैं, शोहरत मिलती है तो बहक जाते हैं। एक छोटे–से इलाके में इक़्तिदार मिलता है, कहीं कॉर्पोरेटर बन जाते हैं, एम.एल.ए. बन जाते हैं, एम.पी. बन जाते हैं तो हमारे कदम डगमगाने लगते हैं। यहाँ हज़रत यूसुफ (अलैहिस्सलाम) को वह सारी चीज़ें मिल सकती थीं जिनके पीछे इंसान भागता है। उनको दौलत भी मिल सकती थी, इज़्ज़त भी मिल सकती थी, शोहरत भी मिल सकती थी, इक़्तिदार भी मिल सकता था। वह सियाह व सफेद के मालिक भी हो सकते थे। बस! सिर्फ एक औरत को खुश करने की ज़रूरत थी। और वह औरत कोई नौकरानी नहीं है, कोई आम औरत नहीं है, कोई घर की ख़ादिमा नहीं है, कोई बूढ़ी नहीं है, कोई बदशक्ल या बदसूरत नहीं है बल्कि वह भी अपनी जगह हुस्न की देवी है। साथ–साथ इक़्तिदार भी उसके हाथ में है। जितना चाहे वह नवाज़ दे, जो चाहे वह दे दे, जितनी चाहे दौलत की बारिश कर दे, जिस ओहदे पर चाहे उनको बिठा दे, जिस शोहरत के मुकाम पर पहुँचाना चाहे वह उनको पहुँचा दे। इससे बेहतर तरक़्क़ी का कोई रास्ता हो सकता था?! इससे बेहतर कामयाबी की कोई राह हो सकती थी? कुरआन करीम कह रहा है:

وَرَاوَدَتْهُ الَّتِيْ هُوَ فِيْ بَيْتِهَا عَن نَّفْسِهٖ

हज़रत यूसुफ (अलैहिस्सलाम) किसी और के घर में नहीं हैं, वह औरत उनके घर नहीं आई है। कुरआन करीम कह रहा है कि:

وَرَاوَدَتْهُ الَّتِيْ هُوَ فِيْ بَيْتِهَا عَن نَّفْسِهٖ

उस औरत ने उनको बहलाना चाहा, फुसलाना चाहा। किसको? जो खुद उस औरत के घर में था यानी उसके घर में रह रहा है। अगर वह नाराज़ हो जाएगी तो घर से निकाल देगी, अगर वह नाराज़ हो जाएगी तो मिस्र से बाहर कर देगी, अगर वह नाराज़ हो जाएगी तो उस कुएँ में दोबारा डलवा देगी, अगर वह नाराज़ हो जाएगी तो उनकी गर्दन कटवा देगी। उसकी नाराज़गी कितनी ख़तरनाक हो सकती है? उसकी खुशी में कितनी कामयाबी मिल सकती है? दोनों चीज़ें थीं लेकिन हज़रत यूसुफ ने क्या जवाब दिया? जब उस औरत ने, जो खूबसूरत भी है, इक़्तिदार की मालिक भी है, उसी के महल में वह पनाह भी लिए हुए हैं, उस औरत के कुछ बहलाने, फुसलाने और लालच देने पर उनका जवाब सुनिये:

قَالَ مَعَاذَ اللّٰهِ

कहा: "अल्लाह की पनाह!"

यह इम्तिहान कितना सख़्त है! ख़ास तौर पर हमारे नौजवानों के लिए क़ाबिल–ए–इबरत है। लेकिन इस इम्तिहान में हज़रत यूसुफ (अलैहिस्सलाम) क्या नमूना पेश कर रहे हैं? कहते हैं: "मआज़ल्लाह!" फिर अगली बात इरशाद फरमाते हैं:

قَالَ رَبِّ السِّجْنُ أَحَبُّ إِلَيَّ مِمَّا يَدْعُونَنِيْ إِلَيْهِ

"ऐ मेरे परवरदिगार! जेल में जाना मुझे गवारा है, मुझे जेल में जाना पसंद है, मैं जेल जाने को तरजीह दूँगा उस बात पर जिस बात पर यह औरत मुझे आमादा कर रही है।"

मज़ीद ग़ौर करने की बात यह है कि अगर हम और आप इस तरह के इम्तिहानों में पूरे उतरते भी हैं तो बहुत घमंड पैदा हो जाता है, दिल में बड़ा तकब्बुर पैदा हो जाता

है। उसको अपनी कामयाबी समझने लगते हैं, उसको अपने अंदर का तक़वा क़रार देने लगते हैं। फिर अकड़कर यह कहते हैं कि कौन मुझे बहका सकता है? कौन मुझे वरगला सकता है? कौन मेरे कदम डगमगा सकता है? कौन है जो मुझसे गलत काम करवा सकता है? लेकिन यूसुफ तो चूँकि नबी थे, तो उन्होंने कहारू

وَإِلَّا تَصْرِفْ عَنِّيْ كَيْدَهُنَّ أَصْبُ إِلَيْهِنَّ وَأَكُن مِّنَ الْجَاهِلِيْنَ

"ऐ मेरे परवरदिगार! अगर आपने मुझे नहीं बचाया तो मैं नहीं बच पाऊँगा। मेरे कदम उसकी तरफ उठ जाएँगे, मेरे हाथ उसकी तरफ उठ जाएँगे, मैं गलती में मुब्तला हो सकता हूँ, गुनाह में मुब्तला हो सकता हूँ।"

इस वाक़्ये से यह चीज़ भी सीखने की है कि इस तरह के मौके पर अगर हमें कोई कामयाबी मिले तो उसको हमें अपने सिर नहीं बाँधना चाहिए। जैसे हज़रत यूसुफ (अलैहिस्सलाम) यहाँ कामयाबी मिलने के मौके पर भी यह कह रहे हैं कि "अल्लाह! तूने बचाया, हममें इतनी ताक़त नहीं है, हममें इतनी कुव्वत नहीं है, हममें इतनी हिम्मत नहीं है, हमारे अंदर इतना हौसला नहीं है कि हम खुद से बच सकें। अगर तेरी मदद न हुई, तूने साथ नहीं दिया, तूने तआवुन नहीं किया, तूने नहीं बचाया, तो मैं नहीं बच पाऊँगा।"

इस पूरे मामले को आप सामने रखिए, इस पूरे क़िस्से को देखिए कि कामयाबी के मरहले, कामयाबी की मंज़िलें कब शुरू होती हैं और आख़िर में क्या होता है? अल्लाह तआला फरमाते हैं:

وَكَذٰلِكَ مَكَّنَّا لِيُوسُفَ فِي الْأَرْضِ

"हमने यूसुफ़ को इक़्तिदार दिया।"

इक़्तिदार यूँ ही नहीं मिलता, मुश्किलात से निजात यूँ ही नहीं मिलती, कुव्वत, शान व शौकत, रौब व दबदबा यूँ ही हासिल नहीं होता। उसके लिए बड़े सख़्त मरहलों से गुज़रना पड़ता है।

इनमें सबसे पहला मरहला तक़वा का है। हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ने जब अपनी फ़ौज के सिपहसालार को ख़त लिखा तो उसमें उन्होंने अपने सिपहसालार ग़ालिब बिन मंसूर को एक नसीहत की। वह नसीहत क्या थी? वह तक़वा की नसीहत थी। हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ने कहा कि दुश्मन की फ़ौज से डरने के बजाय तुम्हें पहले गुनाहों से डरना होगा। उसके बाद कहा कि तुम्हें तक़वा की ज़िंदगी इख़्तियार करनी होगी।

हम समझते हैं कि तक़वा का मतलब यह है कि हर वक़्त मस्जिद में बैठे रहें, तस्बीह पढ़ते रहें, यही हमारे नज़दीक तक़वा है, यही हमारे नज़दीक दीनदारी है। लेकिन उन्होंने तक़वा की तारीफ़ करते हुए कहा:

أفضل العدة وأبلغ المكيدة وأقوى القوة

हम अगर यह तीन बातें समझ लें तो हमारे सारे मसाइल हल हो जाएँगे। पहली बात यह है कि जब कोई भी जंग होती है, कोई भी लड़ाई होती है तो उसमें तीन चीज़ें कामयाबी की ज़मानत हैं:

जंगी साज़–ओ–सामान:

कुरआन करीम में इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि जंगी साज़ व सामान इख़्तियार करो, हासिल करो, उसकी तैयारी करो। जंग जीतने के लिए जिस जंगी सामान की ज़रूरत पड़ती है अगर उसमें कमी है तो वह कमी भी तक़वा पूरी करता है।

जंगी हिकमत–ए–अमली:

दूसरी बात यह है कि जंग जीतने के लिए जंगी हिकमत–ए–अमली और जंगी तदबीर ज़रूरी है। अगर आपके पास हथियार भी हैं, पूरा साज़ व सामान भी है लेकिन अगर आपकी हिकमत–ए–अमली ग़लत है, आपकी तदबीर सही नहीं है तो सिर्फ हथियारों की बदौलत आप कोई जंग नहीं जीत सकते। तो तक़वा में यह दूसरी चीज़ भी पाई जाती है कि हिकमत–ए–अमली का जो नतीजा निकलता है वह तक़वा से निकलता है।

जिस्मानी कुव्वत:

तीसरी बात यह है कि आपके पास हथियार भी हैं, हिकमत–ए–अमली भी है लेकिन तादाद नहीं है, लड़ने वाला कमज़ोर है, बंदूक उठाना तक मुश्किल है, गोली चलाना और फायर करना बाद की बात है, उसकी उँगली ही नहीं चल रही तो क्या वह फायर करेगा? क्या बंदूक चलाएगा? तो उसके लिए कहा कि: وأقوى القوة

यानी जिस्मानी कुव्वत का जो नतीजा निकलता है वह भी तक़वा से हासिल हो जाता है। तो पहली चीज़ तक़वा है यानी तक़वा में साज़ व सामान भी आ गया, हिकमत–ए–अमली भी आ गई, जिस्मानी कुव्वत भी आ गई। जब यह तक़वा पैदा होगा तब कामयाबी हमारे कदम चूमेगी लेकिन आज सूरत–ए–हाल यह है कि हम दावा तो दींदारी का करते हैं और ईमान का दावा तो करते हैं लेकिन हक़ीक़त में हमारे अंदर तक़वा नहीं है।

तक़्वा क्या है ?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

ज़ाहिर परस्ती का दौर:

आप (स0अ0व0) ने इरशाद फ़रमाया: "जिस्म में एक गोश्त का टुकड़ा है, अगर वह ठीक हो जाए तो पूरा जिस्म ठीक हो जाता है और अगर वह बिगड़ जाए तो पूरा जिस्म बिगड़ जाता है, और वह दिल है।"

अफ़सोस की बात है कि आज दुनिया में बस सिर्फ़ ज़ाहिर परस्ती चल रही है, जिसको मुलम्मा साज़ी कहते हैं। आदमी ज़ाहिर को देखता है। यहाँ तक कि आलम यह है कि मदरसा वह अच्छा जिसकी इमारतें अच्छी हों और इदारा वह अच्छा जिसमें ज़्यादा टीप–टाप हो और ज़्यादा मुनज़्ज़म काम नज़र आता हो। बाज़ मर्तबा अंदर से काम बहुत अच्छा होता है लेकिन आदमी के पास वसाइल नहीं होते बल्कि वह काम में लगा होता है तो उसकी तरफ लोग मुतवज्जेह नहीं होते। पहले अल्लाह वालों का हाल यह होता था कि वह किसी जगह बैठ गए तो उनके पास लोग आते थे और उनकी सोहबत में रहकर लोगों की ज़िंदगियाँ बदल जाती थीं। फिर जब मजमा ज़्यादा होने लगता तो वह वहाँ से चले जाते, इसलिए कि उनको ज़्यादा मजमा पसंद नहीं होता था। उनको अपना नाम और शोहरत कमाना पसंद न था। लेकिन आज आलम यह है कि ख़ानकाहें बाक़ायदा बनाई जाती हैं, जबकि अगर अल्लाह का एक बंदा कहीं झोंपड़े में बैठ जाता है तो अल्लाह उससे काम लेता है और उसका फ़ैज़ आम होता है। इस दौर में मुलम्मा साज़ी और दिखावे का जो मिज़ाज बना है, यह दुनिया के उमूमी मिज़ाज का नतीजा है।

ज़िक्र की तालीम:

आजकल फ़ैक्ट्रियों की मस्नूआत (प्रोडक्ट) के इश्तिहार बड़े खूबसूरत तरीक़े से बनाए जाते हैं। ऊपर से पैकिंग हसीन व जमील होती है लेकिन अंदर का माल इंतिहाई मामूली होता है। इस वक़्त दुनिया का जो मिज़ाज बना हुआ है, यह ख़ालिस ग़ैर–इस्लामी मिज़ाज है। इस्लाम का उससे कोई ताल्लुक नहीं। इस्लाम यह कहता है कि दिल पर अस्ल मेहनत करो, दिल को बनाओ, इख़्लास पैदा करो, अल्लाह से ताल्लुक मज़बूत करो, अल्लाह से सच्ची मुहब्बत पैदा करो और यह मुहब्बत ज़िक्र–ए–इलाही से पैदा होगी। कुरआन मजीद में दर्जनों जगह यह बात कही गई कि अल्लाह का कसरत से ज़िक्र करो:

يا أَيُّهَا الَّذِيْنَ آمَنُوا اذْكُرُوا اللّه ذِكْــراً كَثِيْــراً * وَسَبِّحُوهُ بُكْرَةً وَّأَصِيْلاً

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह का खूब ज़िक्र करो और सुबह–शाम उसकी पाकी बयान करो।" (सूरह एहज़ाब: 41–42)

एक दूसरी जगह इरशाद है:

وَمَن يَعْشُ عَن ذِكْرِ الرَّحْمٰنِ نُقَيِّضْ لَهُ شَيْطَاناً فَهُوَ لَهُ قَرِيْنٌ

"और जो कोई रहमान के ज़िक्र से अंधा बन जाता है तो हम उस पर एक शैतान मुसल्लत कर देते हैं, फिर वह उसका दोस्त हो जाता है।" (सूरह ज़ुख़रुफ़: 36)

जब आदमी अल्लाह के ज़िक्र से ग़ाफ़िल हो जाता है तो शैतान उसको बहकाने में कोई कसर नहीं छोड़ता और जब आदमी कसरत से ज़िक्र करता है तो फिर शैतान की राह खोटी होती है और ऐसे लोगों पर शैतान का बस नहीं चलता। दिल को दिल बनाने के लिए ज़िक्र–ए–इलाही शर्त है।

अहलुल्लाह के यहाँ ज़िक्र के बाज़ तरीक़े भी बताए जाते हैं। उनमें सब तरीक़ों की बाक़ायदा अस्ल नहीं है, ताहम उनकी हैसियत हकीमों के मुजर्रब नुस्ख़ों से कम नहीं और वह तरीक़े फ़ायदे से ख़ाली नहीं। मसलन: कलिमा "ला इलाहा इल्लल्लाह" के ज़िक्र में जिस्म के ख़ास और हस्सास मक़ामात पर ज़र्ब लगाई जाती है तो उसका फ़ायदा यह होता है कि पूरे जिस्म पर उसका असर पड़ता है। अल्लाह का नाम जिस्म में घर कर जाता है और ऐसा हो जाता है कि लगता है रोंए–रोंए से अल्लाह का नाम निकल रहा है।

आदमी के अंदर जब ध्यान पैदा हो जाए, आदमी का दिल जब ज़ाकिर हो जाए, आदमी की ज़बान पर जब हर वक़्त ज़िक्र जारी हो जाए, रोंए–रोंए से जब अल्लाह का नाम निकलने लगे तो ज़ाहिर है ऐसे शख़्स के लिए गुनाह करना क्या आसान होगा? जब आदमी को ऐसा इस्तिहज़ार पैदा हो गया कि अल्लाह हमारे सामने है, अल्लाह हमें देख रहा है तो ऐसे शख़्स के लिए गुनाह करना कोई आसान नहीं और मौत के वक़्त यह चीज़ सबसे बढ़कर काम आ जाती है। जब ज़बान बंद हो जाती

है तो अल्लाह तबारक व तआला का नाम दिल से निकलता है।

अल्लाह के बंदों के बाज़ ऐसे वाक़्यात भी हैं कि जब उनकी ज़बान बंद हो गई तो अल्लाह ने उनका दिल ऐसा जारी कर दिया कि दिल से "अल्लाह–अल्लाह" की आवाज़ आने लगी और वह उसी हाल में दुनिया से रुख़्सत हो गए। ज़िक्र की कसरत का एक बड़ा फ़ायदा यह है कि दिल पर उसका असर पड़ता है और दिल ज़ाकिर होता है। सफ़ाई और तज़किया–ए–क़ल्ब के लिए इसकी बड़ी ज़रूरत है।

अंबिया (अलैहिमुस्सलाम) को अल्लाह ने इस दुनिया में इसीलिए भेजा कि वह तिलावत–ए–आयात करें और तज़किया–ए–नुफ़ूस का काम करें, फिर तालीम–ए–किताब व हिकमत का फ़रीज़ा अंजाम दें। फिर अफ़सोस की बात यह भी है कि हमारे यहाँ इसकी तरतीब बदली हुई है। आज तिलावत–ए–आयात पहले मरहले पर है। बच्चों को क़ुरआन मजीद पढ़ाया जाता है, उनको क़ुरआन मजीद की आयात सिखाई जाती हैं। उसके बाद दूसरा मरहला उनकी तरबियत का था कि उनके अख़्लाक़ सँवारे जाते, उनके दिल को पाक बनाया जाता ताकि उसके बाद वह जो इल्म हासिल करते तो वह इल्म साफ़–सुथरा होता।

वरना आज हमारे इस गंदे बर्तन में जब इल्म दाख़िल होता है तो वह भी गंदा हो जाता है और उसके नतीजे में आदमी के अंदर हज़ार ख़राबियाँ पैदा हो जाती हैं। वह अल्लामा बन जाता है, वह बहुत उलूम हासिल कर लेता है और बाज़ मर्तबा उलूम–ए–शरीअत से भी आगे बढ़ जाता है लेकिन सच्ची बात यह है कि अगर दिल का सही तज़किया नहीं हुआ तो उसका नतीजा यह होता है कि उस इल्म से बजाय फ़ायदे के लोगों को नुक़सान पहुँचता है और उसके नतीजे में बड़ाई का एहसास पैदा हो जाता है, तकब्बुर पैदा हो जाता है और न जाने क्या–क्या बुराइयाँ पैदा हो जाती हैं।

क़ुरआन करीम की तरतीब यह है कि तिलावत–ए–आयात के बाद दूसरा मरहला तज़किया–ए–नुफ़ूस का है। दिलों को बुराइयों से पाक किया जाए, गंदगियों से पाक किया जाए। यह इल्म बड़ा हस्सास और नाज़ुक है। इसकी मिसाल दूध की है। अगर बर्तन में आप दूध लेते हैं और उसमें कोई चीज़ पड़ी हुई है तो दूध फट जाएगा। बर्तन साफ़–सुथरा होना चाहिए।

इसी तरह दिल का जो बर्तन है और हमारे दिमाग़ों का जो बर्तन है, अगर यह साफ़–सुथरा नहीं है तो ऐसे उलमा पैदा होंगे जो उम्मत का बेड़ा ग़र्क कर देंगे। उनका हाल यह होगा कि वह सिर्फ़ अपने नाम के लिए बात करेंगे या उनकी तरफ़ से ऐसी राय आएँगी जो अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) की लाई हुई शरीअत और आप (स0अ0व0) के दिए हुए निज़ाम से बाज़ मर्तबा टकराती हुई होंगी। उनके अंदर दीन का सही फ़हम नहीं होगा।

इस वक़्त यह जो सोशल मीडिया का ज़माना है, इसने ऐसी तबाही फैलाई है कि इसमें ऐसे–ऐसे लोग अपनी राय पेश करते हैं जो दीन से कोई वाक़िफ़ियत नहीं रखते और न ही इल्म की गहराई रखते हैं। उनकी तरफ़ से बहुत–सी ऐसी चीज़ें जारी होती हैं जिनको पढ़कर सीधे–सादे लोग गुमराही में मुब्तिला होते हैं।

हमें अपने दिल को बनाने की ज़रूरत है, अपना तज़किया करने की ज़रूरत है। आदाब–ए–इल्म इसी तज़किया के बाद हासिल होते हैं। अगर आदमी तज़किया न करे तो यह भी नहीं आते। तज़किया का ताल्लुक दिल से है। इसी तरह अख़्लाक़ का ताल्लुक कमालात–ए–बातिनी से है और सारे कमालात–ए–बातिनी का ताल्लुक़ दिल से है। चाहे वह तक़वा हो, अख़्लाक़ हों या तवक्कुल हो या इसी तरह जितनी भी दूसरी सिफ़ात–ए–बातिनी हैं, उनका ताल्लुक दिल से है।

जब दिल पर मेहनत होगी तो यह सारी सिफ़ात इंशाअल्लाह आहिस्ता–आहिस्ता पैदा होंगी। इल्म के अंदर रौशनी पैदा होगी। फिर हमारे जो बड़े अल्लाह वाले, बड़े उलमा, बड़े मशाइख़ और बड़े इमाम पैदा हुए और अल्लाह ने उनके फ़ैज़ को आम किया, हज़रात उलमा से भी उसी तरह फ़ैज़ जारी होगा।

तज़किया–ए–नुफ़ूस या तज़किया–ए–क़ुलूब की ज़रूरत हर एक की है, चाहे वह आम लोग हों या ख़ास लोग हों, वह उलमा हों या दानिश्वर हों। यह सब की ज़िम्मेदारी है। अगर हमारे अख़्लाक़ न बन सके और हमारे अंदर अगर इख़्लास न पैदा हो सका और हमारे अंदर माल व जाह की हवस रही और दीमक की तरह अंदर ही अंदर यह बीमारियाँ हमें चाटती गईं तो हमारे दीन के सब कामों में ख़तरा है कि अल्लाह के यहाँ भी मक़बूल न हों और उनके जो असरात दुनिया में ज़ाहिर होना चाहिए, वह भी न हों।

इद्दत के एहकाम

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

बीमारी की वजह से जिस औरत को मुसलसल (लगातार) खून आ रहा हो, उसकी इद्दतः

अगर किसी औरत को लगातार खून आ रहा हो और उसको अपने हैज़ (मासिक धर्म) के दिन याद हों, तो अगर उसको 'इद्दत–ए–तलाक़' गुज़ारनी है, तो वह सेहतमंद औरतों की तरह तीन हैज़ से इद्दत गुज़ारेगी और अगर हैज़ के दिन याद न हों (यानी वह मुतहैयरा हो), तो उसकी इद्दत कुल सात महीने में पूरी होगी; इसमें हर हैज़ के लिए दस दिन फ़र्ज़ (तय) किए गए हैं और हर तुहर (पवित्रता का काल) दो महीने का माना गया है। (शामीः 3/509)

इद्दत शुरू करने के बाद जिसका हैज़ बंद हो जाएः

जो औरत हाइज़ा (मासिक धर्म वाली) थी और तलाक़ के बाद उसने हैज़ के ज़रिए इद्दत गुज़ारनी शुरू कर दी, फिर उसका हैज़ मुस्तक़लि (स्थायी) तौर से बंद हो गया, तो अह्नाफ़ (हनफ़ी मकतब–ए–फ़िक्र) के असल मसले के मुताबिक़ उसको 'सिन्ने–इयास' (मेनोपॉज़ की उम्र) तक इंतज़ार करना होगा, उसके बाद तीन महीने इद्दत गुज़ारनी होगी। लेकिन इमाम मालिक के यहाँ इस मसले में हुक्म यह है कि एक साल में उसकी इद्दत मुकम्मल हो जाएगी; ज़रूरत के तहत इस मसले में इमाम मालिक के क़ौल (कथन) को इख़्तियार किया गया है। (शामीः 3/508)

इमाम मालिक के क़ौल की ताईद (समर्थन) हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के उस असर (कथन) से भी हो रही है जिसे 'मुअत्ता' में नक़ल किया गया है कि हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने फ़रमायाः "जिस औरत को तलाक़ दी गई और उसे एक–दो हैज़ आए, फिर हैज़ आना बंद हो गया, तो वह 9 महीने तक इंतज़ार करे। अगर उसको हम्ल (गर्भावस्था) ज़ाहिर हो जाए तो ठीक है, वरना फिर नौ महीनों के बाद तीन महीने की इद्दत गुज़ारे, फिर उसकी इद्दत पूरी हो जाएगी।" (मुअत्ता, किताबुत–तलाक़, जामेअ इद्दतुत्तलाक़ः 1703)

वती बिश–शुब्हा (भ्रमवश शारीरिक संबंध) की इद्दतः

अगर किसी औरत से शुब्हा (भ्रम या ग़लती) में वती (शारीरिक संबंध) कर ली; मसलनः एक साथ कई औरतों की कई मर्दों से शादी हुई और रुख़्सती के वक़्त ग़लती से किसी दूसरे की बीवी भेज दी गई वग़ैरह, तो ऐसी सूरत में ग़लती का इल्म (पता) होने पर इद्दत गुज़ारना लाज़िम है। इसके बग़ैर वह अपने (असल) शौहर से सोहबत (संबंध) नहीं कर सकती। (अगर इस वती से हमल ठहर जाए, तो उसका बाप वही वती करने वाला माना जाएगा।) (शामीः 3/506)

अगर किसी वजह से निकाह फ़ासिद (अमान्य) था लेकिन वती हो गई, तो उसमें भी इद्दत लाज़िम होगी। (हवाला बाला)

जब तलाक़–ए–रज़ई के बाद इद्दत ही में शौहर का इंतक़ाल हो जाएः

अगर किसी औरत को शौहर ने 'तलाक़–ए–रज़ई' दी, ख़्वाह एक तलाक़–ए–रज़ई रही हो या दो दी हों, और इद्दत पूरी होने से पहले ही शौहर का इंतक़ाल (मृत्यु) हो जाए, तो तलाक़ ख़्वाह शौहर ने बीमारी की हालत में दी हो या सेहत की हालत में, अब उसकी गुज़ारी हुई इद्दत बातिल (रद्द) हो जाएगी और उसे 'इद्दत–ए–वफ़ात' (पति की मृत्यु की इद्दत) गुज़ारनी होगी। ऐसा इसलिए है क्योंकि जिस औरत को तलाक़–ए–रज़ई दी जाए, इद्दत के दौरान उसे बीवी ही माना जाता है और विरासत (उत्तराधिकार) में बाक़ायदा उसे बीवी की हैसियत से हिस्सा मिलता है। हाँ, अगर तीनों हैज़ गुज़रने के बाद शौहर का इंतिक़ाल हुआ, तो चूंकि अब उसका निकाह ख़त्म हो चुका है, लिहाज़ा न तो उसको विरासत में हिस्सा मिलेगा, और न ही उसे इद्दत–ए–वफ़ात गुज़ारनी होगी। (शामीः 3/513, हिन्दियाः 1/531)

जब तलाक़–ए–बाइन के बाद इद्दत के दौरान शौहर का इंतक़ाल हो जाएः

अगर शौहर ने सेहत की हालत में बीवी को 'तलाक़–ए–बाइन' या 'तलाक़–ए–मुग़ल्लज़ा' (तीन

तलाक़) दी, फिर दौरान–ए–इद्दत (इद्दत के बीच) ही शौहर का इंतिक़ाल हो गया, तो उसकी इद्दत में कोई तब्दीली (बदलाव) नहीं होगी; वह तलाक़ वाली इद्दत ही मुकम्मल करेगी।

इसी तरह अगर शौहर ने बीमारी की हालत में तलाक़–ए–बाइन या तलाक़–ए–मुग़ल्लज़ा बीवी की रज़ामंदी से या उसके मुतालबे (मांग) पर दी, तो दौरान–ए–इद्दत शौहर का इंतक़ाल होने से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ेगा और वह तलाक़ वाली इद्दत ही मुकम्मल करेगी, और इन दोनों सूरतों में बीवी शौहर की वारिस भी नहीं होगी।

और अगर बीमारी की हालत में शौहर ने (बीवी की मर्ज़ी के बग़ैर) तलाक़–ए–बाइन या मुग़ल्लज़ा दी और दौरान–ए–इद्दत ही शौहर का इंतिक़ाल हो गया, तो 'इद्दत–ए–तलाक़' और 'इद्दत–ए–वफ़ात' में से जो ज़्यादा लंबी हो, वही उसको पूरी करनी होगी। यानी अगर तीन हैज़ मुकम्मल हो जाएं लेकिन चार महीने दस दिन पूरे न हुए हों, तो चार महीने दस दिन मुकम्मल करेगी; और अगर चार महीने दस दिन हो जाएं लेकिन तीन हैज़ मुकम्मल न हुए हों, तो तीन हैज़ मुकम्मल करे। (हिन्दियाः 1/531, हिदाया मअल–फ़तेहः 4/315, शामीः 3/513)

इद्दत की पाबंदियाँः

इद्दत के दौरान औरत पर कई पाबंदियाँ शरीअत ने आइद (लागू) की हैं। मसलनः हज़रत उम्मे अत्तिया (रज़ियल्लाहु अन्हा) की हदीस में है कि आंहज़रत (स0अ0व0) ने फ़रमायाः

"कोई औरत किसी भी मय्यत पर तीन दिन से ज़्यादा सोग (शोक) नहीं करेगी, सिवाय शौहर के (जिसकी मौत) पर चार महीने और दस दिन (सोग करेगी) और वह रँगा हुआ कपड़ा नहीं पहनेगी सिवाय यमनी चादर के, और न सुरमा लगाएगी और न ही इत्र इस्तेमाल करेगी।" (मुस्लिम, किताबुत–तलाक़, बाब वुजूबिल–इहदाद फ़ी इद्दतिल–वफ़ातः 938/ बुख़ारी, किताबुत–तलाक़ः 5342–5343)

इसी तरह हज़रत उम्मे सलमा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत है कि आंहज़रत (स0अ0व0) ने फ़रमायाः "जिस औरत के शौहर की वफ़ात हो गई हो, वह न तो असफ़र (ज़र्द/पीले रंग) या गेरू से रँगा हुआ कपड़ा पहनेगी, न ही ज़ेवरात पहनेगी, न ख़िज़ाब (मेहंदी/रंग) लगाएगी और न ही सुरमा लगाएगी।" (अबू दाऊद, किताबुत–तलाक़, बाबू फ़ीमा तज्तनिबुल–मुअतद्दतु फ़ी इद्दतिहाः 2304)

इसी तरह की मुतअद्दिद (कई) अहादीस की वजह से फ़ुक़हा (इस्लामी न्यायविदों) ने इद्दत–ए–वफ़ात और इसी तरह तलाक़–ए–बाइन की इद्दत गुज़ारने वाली औरत पर सोग करने को वाजिब और लाज़िम क़रार दिया है। लेकिन जिस औरत को तलाक़–ए–रज़ई दी गई हो, उस पर सोग वाजिब नहीं है, क्योंकि वह एक तरह से अभी निकाह ही में है। इसी तरह पागल, नाबालिग़ या ग़ैर–मुस्लिम औरत पर (मसलनः किसी ने यहूदी या ईसाई औरत से शादी की हो और इद्दत में हो) भी सोग करना वाजिब नहीं है। (हिन्दियाः 1/533–534)

और सोग (शोक) में दर्ज–ज़ेल (निम्नलिखित) चीज़ें दाख़िल हैंः

1– वह किसी भी तौर पर कोई ऐसी चीज़ इख़्तियार न करे जिसका तअल्लुक़ ज़ेब–व–ज़ीनत (सजने–संवरने) से हो; मसलनः मेक–अप न करे, ज़ेवरात न पहने, हर तरह के ज़ेवरात जैसे अँगूठी, नथ और चूड़ी वग़ैरह निकाल दे (अलबत्ता चूड़ी को सिर्फ़ निकालने का हुक्म है, शरअन तोड़ना ज़रूरी नहीं है)। ख़िज़ाब और सुरमा–काजल न लगाए। नए रंगीन कपड़े न पहने; पुराने रंगीन कपड़े जिनसे ज़ीनत (सजावट) नहीं होती, पहन सकती है। (हिन्दियाः 1/533, शामीः 3/531–532)

2– सर में (सुगंधित) तेल न लगाए, अलबत्ता अगर तेल लगाने की आदत थी जिसकी वजह से तेल न लगाने से सर में दर्द शुरू हो गया, तो (सादा) तेल लगा सकती है। बालों को सँवारने के लिए बारीक दंदाने (दाँतों) वाली कँघी इस्तेमाल करना भी मना है, अलबत्ता बाल उलझ गए हों तो मोटे दंदाने की कँघी से बाल दुरुस्त कर सकती है। (शामीः 3/531–532)

3– इत्र और किसी भी तरह की खुशबू का इस्तेमाल न करे, यहाँ तक कि खुशबूदार साबुन भी गुस्ल (स्नान) में इस्तेमाल न करे; अलबत्ता बग़ैर खुशबू का शैम्पू और साबुन इस्तेमाल करने की इजाज़त है। (शामीः 3/532)

4– मुअतद्दह (इद्दत वाली औरत) को निकाह का पैग़ाम (प्रस्ताव) देना भी मना है। अलबत्ता इद्दत–ए–वफ़ात वाली औरत को इशारे–किनाये (परोक्ष रूप) में पैग़ाम देने की इजाज़त है, जबकि इद्दत–ए–तलाक़ वाली को इशारे से भी पैग़ाम देना मना है। अल्लाह तआला का इर्शाद हैः

..... शेषः 14 पर

इस्राईल की मुजरिमाना साज़िश

सैय्यद मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

मशरिक़–ए–वस्ता (मध्य पूर्व) गुज़श्ता कई दहाइयों से सियासी कशमकश, जंगों, बैरूनी मदाख़लतों और ताक़त की रस्साकशी का मरकज़ बना हुआ है। इस ख़ित्ते में ईरान और इस्राईल के दरमियान दुश्मनी एक अहम और ख़तरनाक मसला है। दोनों मोमालिक के तअल्लुक़ात इब्तिदा में इतने कशीदा नहीं थे लेकिन 1979 के ईरानी इंक़िलाब के बाद हालात ने नया रुख़ इख़्तियार किया। ईरान ने इस्राईल को एक ग़ासिब (अवैध कब्ज़ा करने वाली) रियासत क़रार दिया जबकि इस्राईल ने ईरान के बढ़ते हुए असर व रसूख़ और एटमी प्रोग्राम को अपने लिए ख़तरा समझा। इस कशमकश ने वक़्त के साथ खुफ़िया जंग, जासूसी, साइबर हमलों, माशी (आर्थिक) पाबंदियों, प्रॉक्सी वार और बराह–ए–रास्त फ़ौजी हमलों की शक्ल इख़्तियार कर ली।

1948 में इस्राईल ने अपने क़याम के बाद मशरिक़–ए–वस्ता में मुसलसल तनाज़आत पैदा कर दिए। ईरान के शाह के दौर में दोनों ममालिक के तअल्लुक़ात निस्बतन बेहतर थे, मगर इस्लामी इंक़िलाब के बाद ईरान ने फ़िलिस्तीनी काज़ (मुद्दे) की हिमायत और इस्राईल की मुख़ालिफ़त को अपनी पॉलिसी का हिस्सा बना लिया। इस्राईल ने इसके जवाब में ईरान को ख़ित्ते में अपने लिए सबसे बड़ा ख़तरा क़रार दिया।

इस्राईल तवील अर्से से ईरान के एटमी प्रोग्राम को रोकने की कोशिश करता रहा है। इस्राईल का दावा है कि ईरान एटमी हथियार बनाना चाहता है, जबकि ईरान मुसलसल यह मौक़िफ़ इख़्तियार करता है कि उसका प्रोग्राम पुरअमन मक़ासिद के लिए है। ईरान ने मुतअद्दिद बार इल्ज़ाम लगाया कि उसके एटमी साइंसदानों के क़त्ल में इस्राईली खुफ़िया एजेंसी मोसाद मुलव्विस (शामिल) है। कई साइंसदान पुरअसरार बम धमाकों और फायरिंग के वाक़्यात में मारे गए। ईरान के मुताबिक़ इन कार्रवाइयों का मक़सद उसके साइंसी और डिफ़ाई (रक्षा) निज़ाम को कमज़ोर करना था, अब यह कोई नई बात नहीं थी, क्योंकि जिन मुल्कों ने इस्राईल की हिमायत के बगैर एटमी ताक़त बनने की कोशिश की, उनको ऐसी खुफ़िया साज़िशों का सामना करना पड़ा। ऐसा हिंदुस्तान के मशहूर एटमी साइंसदान डॉक्टर होमी जहांगीर भाभा के साथ पेश आया जिनको 1966 को एक हवाई जहाज़ हादसे में ख़त्म किया गया और फिर 2009 से 2013 के दरमियान हिंदुस्तान के मुतअद्दिद साइंसदान मारे गए जिनकी मौत खुफ़िया रह गई। यह इक़दामात बैनुलअक़वामी क़वानीन और इंसानी हुक़ूक़ के उसूलों के ख़िलाफ़ तसव्वुर किए जाते हैं क्योंकि किसी मुल्क के साइंसदानों को खुफ़िया तौर पर क़त्ल करना रियासती दहशतगर्दी के जुमरे में शुमार किया जा सकता है।

ईरान और इस्राईल के दरमियान जंग सिर्फ़ मैदाने जंग तक महदूद नहीं रही बल्कि साइबर दुनिया में भी शदीद कशमकश जारी रही मसलन दुनिया के मशहूर तरीन साइबर हमलों में 'स्टक्सनेट' वायरस (Stuxnet) का नाम नुमायाँ है। यह वायरस ईरान की एटमी तन्सीबात (प्रतिष्ठानों) को नुक़सान पहुँचाने के लिए इस्तेमाल किया गया। मुख़्तलिफ़ बैनुलअक़वामी तजज़िया निगारों ने इस कार्रवाई के पीछे इस्राईल और अमेरिका के इशतिराक (साझेदारी) का ज़िक्र किया। इस हमले के ज़रिए सिनअती (औद्योगिक) निज़ाम को निशाना बनाया गया और ईरान के सेंट्रीफ्यूज मुतास्सिर हुए। नाक़िदीन (समीक्षकों) के मुताबिक़ यह एक ख़तरनाक मिसाल थी जिसने आलमी सतह पर साइबर जंग के दरवाज़े खोल दिए।

इस्राईल ने ईरान के बढ़ते हुए इलाक़ाई असर को रोकने के लिए शाम (सीरिया) और लेबनान में मुतअद्दिद हमले किए। इस्राईल का मौक़िफ़ यह रहा कि ईरान शाम में अपने फ़ौजी अड्डे क़ायम कर रहा है और हिज़बुल्लाह (Hezbollah) को जदीद हथियार फ़राहम कर रहा है। शाम में कई मर्तबा इस्राईली फ़िज़ाई हमले होते चले आ रहे हैं जिनमें फ़ौजी तन्सीबात, असलाह डिपो और अक्सर औक़ात रिहाइशी इलाक़े मुतास्सिर होते हैं। इंसानी हुक़ूक़ के इदारे इन हमलों से शहरी हलाकतों पर तश्वीश ज़ाहिर करते आए हैं। इस्राईल शाम की बदअमनी से फ़ायदा उठाते हुए ईरान के असर को कमज़ोर करता आया है। ईरान मुसलसल फ़िलिस्तीनी आवाम की हिमायत करता आया है जबकि इस्राईल इसे अपनी सलामती के लिए ख़तरा

समझता है। ईरान की हिमायत याफ़्ता तंज़ीमों पर इस्राईल बारहा हमले करता रहा है।

ग़ज़ा पट्टी में इस्राईली फ़ौजी कार्यवाइयों के दौरान हज़ारों शहरी जाँबहक़ (शहीद) हुए। आलमी सतह पर मुतअद्दिद इदारों ने इन हमलों में इंसानी हुक़ूक़ की ख़िलाफ़ वर्ज़ी बताते हुए इस्राईली वज़ीरे आज़म के ख़िलाफ़ आलमी क्रिमिनल कोर्ट से वारंट भी जारी करवाया। बाज़ मुबस्सिरीन (विश्लेषकों) के मुताबिक़ इस्राईल ईरान की फ़िलिस्तीनी मज़ाहमती (प्रतिरोध) गिरोहों की हिमायत को जवाज़ बनाकर ग़ज़ा में सख़्त फ़ौजी कार्यवाइयाँ करता है जिससे आम शहरी सबसे ज़्यादा मुतास्सिर होते हैं।

इस्राईल ने हमेशा आलमी ताक़तों खुसूसन अमेरिका पर ज़ोर दिया कि ईरान पर सख़्त पाबंदियाँ आइद की जाएँ। ईरान के ख़िलाफ़ माशी (आर्थिक) पाबंदियों ने वहाँ की मईशत और आम शहरियों को शदीद मुतास्सिर किया। इस्राईल अपनी सिफ़ारती (राजनयिक) ताक़त और लॉबिंग के ज़रिये अमेरिका को ईरान के ख़िलाफ़ सख़्त इक़दामात पर आमादा करता है जिसमें ईरान के ख़िलाफ़ पाबंदियों में शिद्दत पैदा करना, जब जौहरी मुआहदे (परमाणु समझौते) होने लगते हैं तो ऐन मौक़े पर अमेरिका अलैहदगी इख़्तियार कर लेता है और फिर फ़ौजी दबाव तो इस वक़्त जग ज़ाहिर है।

मोसाद दुनिया की ताक़तवर खुफ़िया एजेंसियों में शुमार किया जाता है। ईरान मुतअद्दिद बार यह दावा करता रहा है कि मोसाद उसके अंदर तख़रीबकारी, जासूसी और बदअमनी फैलाने में मुलव्विस है। ईरान के जौहरी दस्तावेज़ात की चोरी और हस्सास (संवेदनशील) तन्सीबात से मालूमात ग़ायब हो जाने के वाक़्यात आलमी मीडिया में मौज़ू–ए–बहस बने। इस्राईल ने बाज़ मौक़ों पर दावा किया कि उसने ईरान के खुफ़िया प्रोग्राम से मुतअल्लिक़ अहम मालूमात हासिल कीं। ईरान के मुताबिक़ यह इक़दामात उसकी खुदमुख्तारी (संप्रभुता) के ख़िलाफ़ खुली जारहियत (आक्रमण) हैं।

ईरान और इस्राईल के दरमियान मीडिया जंग भी शिद्दत इख़्तियार कर चुकी है। इस्राईल आलमी मीडिया में ईरान को एक ख़तरनाक रियासत के तौर पर पेश करने की कोशिश करता है जबकि ईरान इस्राईल को मज़लूम फ़िलिस्तीनियों पर जुल्म करने वाली रियासत क़रार देता है। इस्राईल ईरान के ख़तरे को बढ़ा–चढ़ा कर पेश करके आलमी हिमायत हासिल करना चाहता है। इसके ज़रिए असलहे की ख़रीदारी बढ़ाई जाती रही है, फ़ौजी इत्तिहाद (गठबंधन) क़ायम किये जाते रहे हैं और अरब मोमालिक के साथ तअल्लुक़ात मज़बूत किये जाते रहे हैं।

अक़वाम–ए–मुत्तहिदा (संयुक्त राष्ट्र) कई मर्तबा मशरिक़–ए–वस्ता में अमन की अपील करता रहा, लेकिन बड़ी ताक़तों की सियासी मसलहतों के बाइस मुस्तक़िल हल सामने न आ सका। आलमी इदारे ताक़तवर मोमालिक के ख़िलाफ़ मोअस्सिर (प्रभावी) कार्रवाई करने में नाकाम रहे हैं, अगर्चे इन बड़े मोमालिक के आवाम की अक्सरियत अपने हुक्मरानों को बेदार करने की ग़ैर–मामूली सई (कोशिश) करते रहे हैं।

ईरान– इस्राईल कशमकश ने पूरे मशरिक़–ए–वस्ता को अदम–ए–इस्तहकाम (अस्थिरता) का शिकार बना दिया है जिसमें जंग है, तेल की क़ीमत का बढ़ना है और बेघर होती आवाम है।

ईरान– इस्राईल तनाज़ा जदीद दुनिया के ख़तरनाक तरीन तनाज़आत में शुमार होता है। इस कशमकश में इस्राईल की खुफ़िया कार्रवाइयों, साइबर हमलों, माशी दबाव, प्रॉक्सी जंगों और फ़ौजी इक़दामात को मुख़्तलिफ़ हलक़े मुजरिमाना साज़िशों के तौर पर देखते हैं। दूसरी जानिब इस्राईल इन कार्रवाइयों को अपनी क़ौमी सलामती के लिए ज़रूरी क़रार देता है।

हक़ीक़त यह है कि यह तनाज़ा सियासी बालादस्ती (प्रभुत्व) के मक़सद से है और इस कशमकश का सबसे ज़्यादा नुक़सान आम इंसानों को उठाना पड़ता है। इराक़, अफ़ग़ानिस्तान के बाद फ़िलिस्तीन, शाम, लेबनान और दीगर मशरिक़–ए–वस्ता के इलाक़ों में बेशुमार लोग ख़ौफ़, ग़ुर्बत (गरीबी) और बेघर होने का शिकार हुए हैं। अगर आलमी बिरादरी ने इन फासिस्ट ताक़तों के ख़िलाफ़ अलाम (आवाज़) बुलंद न किया तो अब देर नहीं कि उनका भी नंबर आ जाए और जो इंसाफ़, तवाज़ुन (संतुलन) और संजीदा सिफ़ारतकारी (राजनय) का रास्ता इख़्तियार कर रहे हैं, वह बहुत जल्द नाकाम हो जाएँगे क्योंकि जो किसी के सामने जवाबदेही का एहसास नहीं रखता उसका अंजाम हिटलर की तरह होना ही चाहिए।

इल्हाद का तूफ़ान - सबब और हल

मोहम्मद नज्मुद्दीन नदवी

कुरआन–ए–मोहकम में खुले अल्फ़ाज़ (शब्दों) में बताया गया है कि इससे पहले की कुतुब–ए–समावी व मज़हबी सहीफ़ों (आसमानी किताबों और धार्मिक ग्रंथों) में तौहीद (एकेश्वरवाद) की तअलीम (शिक्षा) और उसके दो–टूक पैग़ामात थे। दीने–इस्लाम के सिवा तमाम मज़ाहिब व अद्यान (धर्मों) के मज़हबी सहीफ़ों और आसमानी किताबों की इल्हामी व तारीख़ी (दैवीय व ऐतिहासिक) और इस्तनादी (प्रमाणिक) हैसियत अगरचे निहायत ग़ैर–महफ़ूज़ और मख़दूश (संदेहास्पद) नज़र आती है, इससे क़ते–नज़र (अलग हटकर) फिर भी उनके औराक़ व सफ़हात (पन्नों) में तौहीद की अमानत कहीं न कहीं दिखाई देती है। अगर किसी को इस हक़ीक़त के एतराफ़ (स्वीकार करने) में तअम्तुल (संकोच) हो तो कुरआन–ए–मुहकम की इस शहादत (गवाही) पर एक नज़र डाल ली जाए:

أَمِ اتَّخَذُوا مِن دُونِهِ آلِهَةً قُلْ هَاتُوا بُرْهَانَكُمْ هَذَا ذِكْرُ مَن مَّعِيَ وَذِكْرُ مَن قَبْلِي بَلْ أَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ الْحَقَّ فَهُم مُّعْرِضُونَ

"क्या उसे छोड़कर उन्होंने दूसरे ख़ुदा बना रखे हैं? उनसे कहो कि तुम अपनी दलील लाओ। यह किताब है जिसमें मेरे दौर वालों के लिए नसीहत है और वह किताबें भी मौजूद हैं जिनमें मुझसे पहले वालों के लिए नसीहत थी। बात यह है कि उनमें अक्सर लोग हक़ को जानते नहीं, इसी वजह से मुँह मोड़े हुए हैं।" (सूरह अम्बिया: 24)

मज़ाहिब व अद्यान की तारीख़ में इस्लाम का 'तसव्वुर–ए–इलाह' (ईश्वर की परिकल्पना) वाज़ेह (स्पष्ट) और ख़ालिस व आमेज़िश (मिलावट) से मुमर्रा व पाक और तमाम तर उयूब (कमियों) से मुनज़्ज़ह (पवित्र) है। हर तरह के नज़रिया–ए–शिर्क का ख़ात्मा और हुलूल व इत्तिहाद (अद्वैतवाद/पैंथिज्म) से बाल–कुल्लिया (पूरी तरह) पाक है। इसके बिल–अक्स (विपरीत) दीगर (अन्य) अद्यान व मज़ाहिब में, ख़्वाह अहदे–क़दीम (प्राचीन काल) में हो या जदीद (आधुनिक) में, तसव्वुर–ए–खुदा और उसकी वहदानियत (एकेश्वरवाद) की हैसियत एक मुअम्मा (पहेली) की है, जिसकी गिरह–कुशाई (सुलझाने) में मसरूफ़ शख़्स खुद उलझकर रह जाता है। वह दार्शनिक बारीकियों और मुश्किल तफ़सीर (व्याख्या) का शिकार होकर एक मुअम्मा बन गया है, जबकि इस्लाम ने आसान, दिलनशीन और फ़ितरी (प्राकृतिक) अंदाज़ में निज़ाम–ए–तौहीद को पेश किया है। कुरआन–ए–मोहकम में इर्शाद है:

قُلْ هُوَ اللَّهُ أَحَدٌ * اللَّهُ الصَّمَدُ * لَمْ يَلِدْ وَلَمْ يُولَدْ * وَلَمْ يَكُن لَّهُ كُفُوًا أَحَد

"कह दीजिए कि वह अल्लाह एक है। अल्लाह बेनियाज़ (परम–स्वतंत्र) है। न उसकी कोई औलाद है और न वह किसी की औलाद है। और न कोई उसका हमसर (बराबर का) है।" (सूरह इख़्लास: 1–4)

इस मुख़्तसर (छोटी) सी सूरत में इस्लाम का तसव्वुर–ए–इलाह वाज़ेह कर दिया गया है कि तमाम अशिया (चीज़ों) की तख़्लीक़ (सृष्टि) उसने फ़रमाई और उसकी तख़्लीक़ किसी ने नहीं की। इसी पसमंज़र (पृष्ठभूमि) में सूरह हूद की आयत–ए–करीमा तिलावत की जाए, इससे बात बे–गुबार (बिल्कुल साफ़) हो जाएगी:

وَلِلَّهِ غَيْبُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ وَإِلَيْهِ يُرْجَعُ الْأَمْرُ كُلُّهُ فَاعْبُدْهُ وَتَوَكَّلْ عَلَيْهِ وَمَا رَبُّكَ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ

"आसमानों और ज़मीन की छुपी बात का इल्म अल्लाह ही के पास है और हर अम्र (मामला) उसी की तरफ़ लौटाया जाता है। बस तू उसकी इबादत कर और उसी पर भरोसा रख, और तुम जो कुछ करते हो उससे अल्लाह बे–ख़बर नहीं है।" (सूरह हूद: 123)

अल्लाह तआला ने अहल–ए–शिरक व कुफ़्र के 'तसव्वुर–ए–इलाह' (झूठे पूज्यों की परिकल्पना) का ज़िक्र मुतअद्दिद (कई) मक़ामात में किया है और यह हक़ीक़त भी वाज़ेह फ़रमाई कि नुजूल–ए–कुरआन (कुरआन के अवतरण) के ज़माने में रसूल–ए–इंसानियत (स0अ0व0) को जिस क़िस्म की क़ौम से साबक़ा (सामना) पड़ा, एतक़ादी (आस्था के) लिहाज़ से वहाँ दो गिरोह पाए जाते थे।

एक गिरोह तो ऐसा था जो वजूद–ए–बारी तआला

(ईश्वर के अस्तित्व) और ख़ालिक़–ए–कायनात (सृष्टि के रचयिता) को तस्लीम करता था, मगर उसके साथ उसकी फ़रमाँ–रवाई (शासन) में ग़ैरों को शरीक़ व सहीम (साझेदार) तसव्वुर करता था। दूसरा गिरोह भी था जो निरी जिहालत (अज्ञानता) की वजह से उस अज़ीम ताक़त ही का मुनकिर (इनकारी) था जिसने इस कायनात को वजूद बख़्शा था।

दोनों गिरोहों को वहदानियत–ए–इलाह और वजूद–ए–बारी तआला पर ठोस और मज़बूत दलाइल (तर्कों) के ज़रिये पैग़ाम–ए–इलाही पेश किया गया। और जिन लोगों ने फ़िक्री व अमली तौर पर ग़ैरों में खुद–साख़्ता (स्व–निर्मित) अज़मत की असास (बुनियाद) पर सिफ़ात–ए–इलाहिया की हुक्मरानी व तसव्वुर पर उन्हें शफ़ीअ (सिफ़ारिशी) गरदाना और उनके सामने जब्हा–साई (माथा टेका) की, फ़ितरी व अक़्ली और इल्मी व साइंसी, हर लिहाज़ से उनके दिल व दिमाग़ को मुतास्सिर (प्रभावित) किया गया और उनके माबूदों का हाल वाक़ेआती तर्ज़–ए–इस्तदलाल (तथ्यात्मक दलील) में इस तरह बयान किया गया:

يَا أَيُّهَا الْإِنسَانُ ضُرِبَ مَثَلٌ فَاسْتَمِعُوا لَهُ إِنَّ الَّذِينَ تَدْعُونَ مِن دُونِ اللَّهِ لَن يَخْلُقُوا ذُبَاباً وَلَوِ اجْتَمَعُوا لَهُ وَإِن يَسْلُبْهُمُ الذُّبَابُ شَيْئاً لَّا يَسْتَنقِذُوهُ مِنْهُ ضَعُفَ الطَّالِبُ وَالْمَطْلُوبُ * مَا قَدَرُوا اللَّهَ حَقَّ قَدْرِهِ إِنَّ اللَّهَ لَقَوِيٌّ عَزِيزٌ

ऐ लोगो! एक मिसाल कही जा रही है, ज़रा इस पर कान रखकर सुनो। अल्लाह के सिवा जिनको तुम पूजते हो, वे एक मक्खी भी हरगिज़ नहीं बना सकते, अगरचे सारे के सारे (इस काम के लिए) जमा हो जाएं। और अगर उनसे मक्खी कोई चीज़ छीन ले तो वे उससे छुड़ा नहीं सकते। बड़ा बोदा (कमज़ोर) है चाहने वाला और बड़ा बोदा है जिसको चाहता है। उन्होंने अल्लाह की क़द्र नहीं समझी जैसी उसकी क़द्र का हक़ है, ला–रैब (निःसंदेह) अल्लाह ज़ोरआवर और ग़ालिब व ज़बरदस्त है।

(सूरह हजः 73–74)

इस्लाम के निज़ाम–ए–तौहीद और तसव्वुर–ए–इलाह में यही वह वाज़ेह और ग़ैर–मुबहम (स्पष्ट) तसव्वुर था जिसने तारीख़–ए–इंसानी में पहली बार दिल व दिमाग़ को मुतास्सिर किया और इसके मुफ़ीद (लाभदायक) असरात इंसानी दुनिया पर पड़े। मिस्टर एडवर्ड डेनिसन रॉस (म. क्मदपेवद त्वे) ने साफ़ अल्फ़ाज़ में इज़हार व एतराफ़ करते हुए लिखा है:

"मोहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की तालीमात का बुनियादी उसूल तौहीद था, इसी की तब्लीग़ उन्होंने अपने अरब समकालीन लोगों के सामने की जो सितारों को पूजते थे; इसी की तब्लीग़ ईरानियों के सामने की जो यज़दान व अहरमन (प्रकाश और अंधकार के दो देवताओं) को मानते थे; इसी की तुर्कों के सामने की जो किसी ख़ास चीज़ के परस्तार (पुजारी) न थे। अक़ीदा–ए–तौहीद की सादगी इस्लाम के विस्तार व इशाअत (प्रसार) में ग़ालिबन ग़ाज़ियों की तलवार से ज़्यादा बड़ा आमिल (कारक) थी। यह एक ताज्जुबख़ेज़ वाक़्या है कि तुर्क, जिनकी फ़ौजी यल्ग़ार (आक्रमण) नाक़ाबिल–ए–मुज़ाहमत (अदम्य) बन गई थी, उन सबको इस्लाम के अक़ीदे ने फ़तेह कर लिया और उन्होंने मुस्लिम हुकूमतें क़ायम कीं। तेरहवीं सदी के मंगोलों ने जब बग़दाद को ताराज (तहस–नहस) किया तो उन्होंने इस्लाम के आसार को मिटा डालने के लिए वह सब कुछ किया जो वे कर सकते थे; उस वक़्त ख़लीफ़ा–ए–इस्लाम को अगरचे मिस्र की तारीकी में धकेल दिया गया था, मगर मंगोलों की बनाई हुई हुकूमतें बहुत जल्द मुस्लिम रियासतों में तब्दील हो गईं।"

(Introduction to George Sale's translation of the Koran, page: 8)

अरबी कहावत है कि:

إن البعرة تدل على البعير

"ज़मीन पर पड़ी हुई मेंगनियाँ इस बात पर दलालत करती हैं कि यहाँ से ऊँट गुज़रा है।"

और:

إن أثر الأقدام يدل على المسير والروث على الحمير

"ज़मीन पर पाँव के निशानात से आदमी के गुज़रने का पता चलता है, लीद से गधे का पता चलता है।"

इसी तरह से वजूद–ए–बारी की निशानियों में एक अहम निशानी खुद इंसान का वजूद भी है। मिट्टी का यह हँसता–बोलता पुतला अगर खुद अपनी ज़ात पर ग़ौर–ओ–फ़िक्र से काम ले, और तख़्लीक़–ए–इंसान (मानव संरचना) के इब्तिदाई (शुरुआती) से आख़िरी मरहलों को वसीअ (व्यापक) पैमाने पर फैलाकर सोचा और देखा जाए, तो इसमें एक कायनात नज़र आएगी। और यह हक़ीक़त उभर–उभर कर सामने आएगी कि इंसान अपने वजूद में किसी ज़ात–ए–आली (परम सत्ता) का सरापा मोहताज है। अल्लाह तआला इंसानों से सवाल करता है ताकि सारी हक़ीक़तों को सामने रखकर वह बताए कि

सानेअ (शिल्पी) व ख़ालिक़ और क़ादिर–ए–मुतलक़ वही ख़ुदा–ए–वहदहू ला–शरीक–लह है:

أَفَرَأَيْتُم مَّا تُمْنُونَ * أَأَنتُمْ تَخْلُقُونَهُ أَمْ نَحْنُ الْخَالِقُونَ

"ऐ इंसानो! क्या तुमने उस मादा–ए–मनविया (वीर्य) पर ग़ौर नहीं किया जिसे तुम रहम (गर्भाशय) में टपकाते हो? कि तुम उस क़तरा–ए–आब (पानी की बूँद) को इंसानी वजूद बख़्शते हो या हम उसको वजूद अता करने वाले हैं?" (सूरह वाक़्याः 58–59)

कुरआन–ए–मोहकम में जमादात (निर्जीव), नबातात (वनस्पति) और हैवानात के बारे में वजूद–ए–बारी तआला की बेशुमार निशानियों के बारे में बताया गया है, और कुरआन–ए–मुहकम में फ़रमाया गया है:

وَفِي الْأَرْضِ آيَاتٌ لِّلْمُوقِنِينَ * وَفِي أَنفُسِكُمْ أَفَلَا تُبْصِرُونَ

"और ज़मीन में यक़ीन करने वालों के लिए निशानियाँ मौजूद हैं, और खुद तुम्हारे अंदर भी; क्या तुम देखते नहीं?"

इसके बाद भी न मानने वालों को निहायत हकीमाना (बुद्धिमत्तापूर्ण) अंदाज़ में समझाया गया है कि:

يَا أَيُّهَا الْإِنسَانُ مَا غَرَّكَ بِرَبِّكَ الْكَرِيمِ * الَّذِي خَلَقَكَ فَسَوَّاكَ فَعَدَلَكَ * فِي أَيِّ صُورَةٍ مَّا شَاءَ رَكَّبَكَ

"ऐ इंसान! तुझे तेरे उस रब–ए–करीम से किस चीज़ ने धोखे में डाल दिया है? जिसने तुझे पैदा किया, तेरे आज़ा (अंग) दुरुस्त किए और तेरी कुव्वतों में एतिदाल (संतुलन) पैदा किया, और अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ तेरे अनासिर (तत्वों) को तरकीब दी।" (अलइन्फ़ितारः 6–8)

अभी तक हमने अफ़हाम–व–तफ़हीम (समझने–समझाने) के तहत चंद आयतों का इंतख़ाब (चयन) इसलिए किया कि ज़रा गहराई में उतर कर देखा जाए तो नज़र आता है कि ख़ालिक़ (सृष्टा) और मख़लूक़ (सृष्टि) के माबैन (बीच) रब्त (संबंध) की नौइयत (प्रकृति) क्या है। वजूद–ए–बारी तआला पर इंसानी अक़्ल–ओ–ख़िरद खुद रहनुमाई करती है और फ़ितरत खुद भी ग़ौर–ओ–फ़िक्र की दावत देती है और रहनुमाई भी, और साथ ही नक़्श–ए–तौहीद भी क़ायम करती है, और यह कि इस्लाम का तसव्वुर–ए–इलाह वाज़ेह और शफ़्फ़ाफ़ (पारदर्शी) है।

..... शेषः इद्दत के एहकाम

وَلاَ جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيْمَا عَرَّضْتُم---

(अल–बक़रहः 235)

"और इसमें तुम पर कोई गुनाह नहीं जो तुम उन औरतों से पैग़ाम के सिलसिले में इशारे–किनाये से काम लो, या अपने जी में इसको छुपा रखो।" (हिन्दियाः 1/534)

मुअतद्दह औरत के लिए घर से बाहर निकलना भी मना है, चुनाँचे अल्लाह तआला का इर्शाद है:

لَا تُخْرِجُوهُنَّ مِن بُيُوتِهِنَّ...

"न तुम उन औरतों को उनके घरों से निकालो और न वह खुद निकलें, सिवाए इसके कि वह कोई खुली बेहयाई कर बैठें।" (अत–तलाक़ः 1)

इसीलिए फ़ुक़हा ने सराहत (स्पष्ट) की है कि अगर दौरान–ए–इद्दत नान–नफ़क़ा (भरण–पोषण/ख़र्चे) का इंतज़ाम हो, तो किसी भी क़िस्म की मुअतद्दह के लिए घर से निकलना ममनूअ (वर्जित) है। अलबत्ता अगर नान–नफ़क़ा का इनहिसार (निर्भरता) उसी की कमाई पर हो; मसलनः वह सरकारी या निजी इदारे (संस्था) में मुलाज़िम (कर्मचारी) है और इतनी लंबी छुट्टी नहीं मिल सकती और ख़र्चे का दारो–मदार उसी की कमाई पर हो, या कमाई का कोई और ज़रिया इख़्तियार किए हुए हो, तो फ़ुक़हा ने 'इद्दत–ए–वफ़ात' वाली को (ज़रूरत के तहत दिन में) निकलने की इजाज़त दी है, मगर 'इद्दत–ए–तलाक़' वाली को इजाज़त नहीं दी है; क्योंकि इद्दत–ए–वफ़ात वाली का नफ़क़ा किसी (शौहर) पर नहीं होता, जबकि इद्दत–ए–तलाक़ वाली का नफ़क़ा उसके शौहर के ज़िम्मे होता है। इस पर क़यास (अनुमान) करके हम कह सकते हैं कि अगर इद्दत–ए–तलाक़ वाली को भी (शौहर से ख़र्च न मिलने की वजह से) सख़्त दुश्वारी हो रही हो, तो वह भी निकल सकती है, मगर यह ध्यान रहे कि वह सिर्फ़ दिन में जाए और रात अपने (इद्दत वाले) घर ही में गुज़ारे। (हिन्दियाः 1/534, शामीः 3/535)

दुनिया व आख़िरत की निजात की राज़

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

हुज़ूर–ए–अकरम (स0अ0व0) से मोहब्बत करने वाला हर उम्मती यह समझता है कि अल्लाह तबारक व तआला ने निजात–ए–दुनियवी व उख़रवी (दुनिया और आख़िरत की सफलता) सिर्फ़ और सिर्फ़ अपने नबी (स0अ0व0) की इत्तिबा (अनुसरण) में रख दी है। अगर हम सही तौर पर ग़ौर करें तो हमको यह बात पूरे तरीक़े से मालूम हो जाती है कि दिल का सुकून और इत्मिनान अल्लाह तबारक व तआला की बंदगी और नबी–ए–करीम (स0अ0व0) की सुन्नत पर अमल करने में है, क्योंकि आपकी ज़िंदगी में हमारे लिए बेहतरीन नमूना (आदर्श) है:

لَقَدْ كَانَ لَكُمْ فِيْ رَسُولِ اللَّهِ أُسْوَةٌ حَسَنَةٌ

"तुम्हारे लिए अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़िंदगी में बेहतरीन नमूना है।" (अल–एहज़ाबः 21)

और इसी तरह अल्लाह तआला का ज़िक्र भी तुमानियत–ए–क़ल्ब (दिल के इत्मीनान) का ज़रिया है:

أَلاَ بِذِكْرِ اللّهِ تَطْمَئِنُّ الْقُلُوبُ

"याद रखो! सिर्फ़ अल्लाह का ज़िक्र ही वह चीज़ है जिससे दिलों को इत्मीनान नसीब होता है।" (अर–रअदः 28)

लेकिन अफ़सोस की बात है कि आज हम सुकून–ए–क़ल्ब का ज़रिया किसी और चीज़ को समझने लगे हैं। हममें से अक्सर नौजवान गाने सुनने में अपने दिल का सुकून देखते हैं। जिस चीज़ को अल्लाह तआला ने हराम क़रार दिया हो, जिसमें वक़्त की बर्बादी हो, ज़ेहनी सुकून ग़ारत (नष्ट) होता हो, नमाज़ों की हलावत (मिठास) न मिलती हो, दीनी मिज़ाज न पैदा हो, आज उन्हीं चीज़ों से दिल को बहलाया जा रहा है।

हमारे नौजवान रक़्स व सुरूर (नाच–गाने), गाने सुनने, गाने बजाने में मुनहमिक (डूबे हुए) हैं और अपनी ज़िंदगी को इसमें लगाए हुए हैं। आपने (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने) जो अलामात–ए–क़यामत (क़यामत की निशानियाँ) बताई हैं, उसमें यह भी है कि जब गाने सुने जाएँगे तो अल्लाह की तरफ़ से सूरतें मस्ख़ (विकृत) कर दी जाएँगी, शक्लें बिगाड़ दी जाएँगी और आज देखा जाए तो ऐसा हो रहा है; कितने नौजवान लड़के लड़कियों के लिबास में हैं बल्कि लड़कियों की शक्ल व सूरत को अपना रहे हैं; बालों का स्टाइल, चेहरे की बनावट सब उन्हीं की तरह करने की कोशिश कर रहे हैं और कुछ यही हाल लड़कियों का है, वह लड़कों की तरह बनना चाह रही हैं। फ़ितरत (प्रकृति) के ख़िलाफ़ करने की कोशिश की जा रही है और यह अल्लाह की तरफ़ से अज़ाब है।

नाफ़रमानी की सज़ा के तौर पर यह अज़ाब गुज़श्ता (पिछली) क़ौमों पर भी उतारा गया। बनी इस्राईल को बंदर बनाया गया, एक जगह इर्शाद है:

فَلَمَّا عَتَوْاْ عَن مَّا نُهُواْ عَنْهُ قُلْنَا لَهُمْ كُونُواْ قِرَدَةً خَاسِئِيْنَ

"हुआ यह कि जिस काम से उन्हें रोका गया था जब उन्होंने उसके ख़िलाफ़ सरकशी (विद्रोह) की तो हमने उनसे कहारू जाओ, ज़लील बंदर बन जाओ।" (सूरह आराफ़ः 166)

दूसरी जगह इरशाद फ़रमायाः

وَجَعَلَ مِنْهُمُ الْقِرَدَةَ وَالْخَنَازِيْرَ

"और उनमें से लोगों को बंदर और सूअर बना दिया।" (सूरह माइदाः 60)

हुज़ूर–ए–अकरम (स0अ0व0) ने क़यामत से क़रीब जिन बुरे आमाल पर अल्लाह की तरफ़ से सख़्त तरीन पकड़ का ज़िक्र किया और अज़ाब–ए–इलाही का ज़िक्र फ़रमाया, उनमें (ज़मीन में) धँसा दिया जाना, चेहरों का मस्ख़ होना और पत्थरों का बरसना है। लेकिन यह कब होगा? जब नाच–गाना आम हो जाएगा, हर जगह हर घर में आलात–ए–मौसिक़ी (संगीत के यंत्र) दाख़िल हो जाएँगे, रक़्स व सुरूर की महफ़िलें आम हो जाएँगी,

बच्चों और बच्चियों को नाच–गाना सिखाया जाएगा और यह एक फ़न (कला) समझा जाएगा, गिटार और आलात–ए–मौसिक़ी के ज़रिए माल कमाया जाएगा और लोग इसको खूब शौक़ से सुनेंगे, हर गली हर महल्ले में बल्कि हर घर में शराब पी जाएगी। मौजूदा दौर में ये चीज़ें आम हो रही हैं।

हदीस में यह बात भी इरशाद फ़रमा दी गई कि जब "अम्र बिल–मारूफ़" और "नही अनिल–मुनकर" (भलाई का हुक्म देना और बुराई से रोकना) का फ़रीज़ा उलेमा तर्क (छोड़) कर देंगे और गुनाह आम हो जाएगा और उस पर रोक–टोक नहीं होगी, तो आसमान से सज़ाएँ दी जाएँगी और सज़ाओं का तअय्युन (निर्धारण) भी कर दिया गया कि शक्लें मस्ख़ कर दी जाएँगी, ज़मीन में धँसा दिया जाएगा या आसमान से पत्थर बरसाए जाएँगे। यह हदीस जहाँ क़यामत की निशानियों का तज़किरा कर रही है, वहीं उम्मत–ए–मुस्लिमा को मुतनब्बिह (सचेत) कर रही है और उलेमा को उनका फ़र्ज़–ए–मंसबी (कर्तव्य) याद दिला रही है कि अगर अज़ाब उन लोगों पर आएगा जो यह काम कर रहे हैं, तो उलेमा अपना फ़र्ज़–ए–मंसबी अदा न करने की सूरत में मुजरिम (दोषी) होंगे:

يَكُوْنُ فِي آخِرِ الْأُمَّةِ خَسْفٌ وَمَسْخٌ وَقَذْفٌ، قَالَتْ: قُلْتُ: يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ! أَنُهْلِكُ وَفِيْنَا الصَّالِحُوْنَ؟ قَالَ: نَعَمْ! إِذَا ظَهَرَ الْخُبُثُ(جامع ترمذی ، ابواب الفتن: ٢١٨٥)

हज़रत आयशा (रज़ि0) फ़रमाती हैं कि आप (स0अ0व0) ने इरशाद फ़रमाया: इस उम्मत के आख़िरी अहद (दौर) में यह वाक़यात ज़ाहिर होंगे, ज़मीन में धँसा दिया जाना, शक्लों का मस्ख़ होना और आसमान से पत्थरों की बारिश का होना। हज़रत आयशा फ़रमाती हैं कि मैंने कहा: ऐ अल्लाह के रसूल (स0अ0व0)! क्या हम हलाक (नष्ट) कर दिए जाएँगे जबकि हममें नेक लोग भी मौजूद होंगे? आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया: हाँ! जब फ़िस्क़ व फ़ुजूर (पाप और अनैतिकता) आम हो जाएगा।

इस्लाम दुश्मनी का मुक़ाबला कैसे करें

हज़रत मौलाना सैय्यद वाज़ेह रशीद हसनी नदवी (रह0)

"मग़रिब की इस्लाम दुश्मनी के ख़ात्मे के लिये चार तरीक़े इस्तेमाल किये जा सकते हैं:

1– हम हक़ीक़ी माने में मुसलमान हों, अपनी ज़िन्दगी में इस्लामी तालीमात को अमली तौर पर नाफ़िज़ करके ग़ैरों के सामने इस्लामी अख़्लाक़ का नमूना पेश करें जैसा कि माज़ी में असलाफ़ ने किया कि बहुत से मोमालिक सिर्फ़ मुस्लिम फ़ातिहीन के अख़्लाक़ की वजह से फ़तेह हो गए।

2– ताक़तवर और मुअस्सिर मीडिया के क़याम को अमल में लाया जाए और दुनिया की मुख़्तलिफ़ ज़बानों में इस्लाम को पेश किया जाए, क्योंकि राय आम्मा को मुख़ातिब करने का मीडिया बेहतरीन ज़रिया है, लिहाज़ा बैनुल अक़वामी सतह पर मीडिया के ज़रिये मुअस्सिर अंदाज़ में इस्लाम की तर्जुमानी की जाए।

3– मुख़्तलिफ़ आलमी ज़बानों पर कुदरत रखने वाले दाई तैयार किये जाएं।

4– दुनिया भर में क़ायम इस्लामी इदारे मुनाफ़सत और आपसी टकराव के रास्ते को छोड़कर ख़िदमते दीन के लिए मुश्तरक लाइहा–ए–अमल तय करें, आपस में इत्तिहाद और तआउन की रूह पैदा करें और एक ही मैदान में तवज्जो देने के बजाय मुख़्तलिफ़ मैदानों को अपनी तवज्जो का मरकज़ बनाएं, ज़माने के नये तक़ाज़ों, ख़तरात और चैलेंजेज़ का लिहाज़ करते हुए हिकमत व दानाई पर मुबनी हिकमते अमली अख़्तियार करें और ग़ैर मुस्लिमों के सामने इस्लाम की सही और हक़ीक़ी तस्वीर पेश करें।"

(दावत–ए–इस्लामी: मसाइल, अंदेशे और तक़ाज़े: 138)

हम है तो खुदा भी है

मुहम्मद मुसअब नदवी

रोम के क़ैदख़ाने में एक नौजवान सर झुकाए बैठा हुआ है, तीन दिन गुज़र चुके हैं, उसके हलक़ से एक क़तरा पानी तक नहीं उतरा। शिद्दत–ए–प्यास से होठों पर खुश्की जम गई है, भूख ने पेट को पीठ से मिला दिया है, सामने ख़िंज़ीर (सूअर) का गोश्त और शराब रखी हुई है, वह इन हराम चीज़ों की तरफ़ निगाह उठाना भी गवारा नहीं करता। एक सिपाही खड़ा बुलंद आवाज़ में कह रहा है: कुछ खा लो, क्या यूँ ही दम तोड़ने का इरादा है? नौजवान अब्दुल्लाह बिन हुज़ाफ़ा सहमी (रज़ियल्लाहु अन्हु) उसकी बातों की तरफ़ ज़रा भी मुतवज्जह नहीं होते।

अब्दुल्लाह बिन हुज़ाफ़ा सहमी वह सहाबी–ए–रसूल हैं जो इब्तिदा–ए–इस्लाम ही में इस्लाम के साया–ए–आतिफ़त (शरण) में आ गए थे। आप क़ासिद–ए–रसूल (रसूल के दूत) हैं, शहंशाह–ए–किसरा को सय्यिदुल अंबिया मोहम्मद (स0अ0व0) का पैग़ाम पहुँचा चुके हैं। अब हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि0) का अहद–ए–ख़िलाफ़त है, फ़ुतूहात (जीत) का सिलसिला चहार जानिब (चारों तरफ़) फैल रहा है, इस्लामी फौजें रोम की सल्तनत में दाख़िल हो चुकी हैं। शहंशाह–ए–रोम क़ैसर का फ़रमान है कि मुसलमान फ़ौजी कहीं भी गिरफ़्तार हों तो उनको पाबंद–ए–सलासिल (जंजीरों में जकड़) कर के दरबार में हाज़िर किया जाए।

अल्लाह की मर्जी, मुजाहिदीन–ए–इस्लाम का एक गिरोह दुश्मनों के हाथ आ गया जिनमें अब्दुल्लाह बिन हुज़ाफ़ा सहमी भी थे। जब दरबार–ए–क़ैसर में मुजाहिदीन की यह जमात लाई गई तो क़ैसर–ए–रोम की निगाह अब्दुल्लाह बिन हुज़ाफ़ा सहमी पर पड़ी। उसने आपको बगौर देखा। पुरसुकून, हसीन व जमील चेहरा, माह व अंजुम (चाँद–तारे) जैसा। चेहरे की सुर्ख़ी शफ़क़ की तस्वीर पेश कर रही थी। मियाना क़द व क़ामत, जज़्बात में एक तलातुम (तूफ़ान) सा, कुशादा (चौड़ी) पेशानी जिस पर हर महाज़ फ़तह कर लेने की दास्तान लिखी हो। चाल–ढाल पर ख़ौफ़ व हिरास का कोई असर नहीं, बेबाक और साफ़–सुथरा लहजा। क़ैसर–ए–रोम इस मर्द–ए–मोमिन की इस्तिक़ामत (मजबूती) देख कर हैरान रह गया। बड़ी अपनाईयत और नर्मी से आपके सामने पेशकश रखता है कि अगर ईसाईयत क़बूल कर लो तो मैं तुम्हारी और तुम्हारे साथियों की जान बख़्श दूँगा।

आपने हिक़ारत से उसकी जानिब देख कर कहा: "मौत मुझे इससे ज़्यादा अज़ीज़ है।"

क़ैसर–ए–रोम ने अपने ग़ुस्से को क़ाबू में किया, ज़रा तहम्मुल (धैर्य) के साथ दूसरा वार किया। उसे अंदाज़ा था कि क़ीमत लगाई जाए तो इंसान क्या, दुनिया की हर चीज़ ख़रीदी जा सकती है। उसने फिर मोहब्बत भरे लहजे में कहा: "देखो! अगर तुम मेरा मज़हब इख़्तियार कर लो तो मैं तुम्हें हुकूमत व इक़्तिदार में शरीक कर लूँगा।"

हज़रत अब्दुल्लाह पहले से ज़्यादा जोश व वलवले के साथ कहते हैं: "यह हुकूमत क्या चीज़ है! अगर तुम मुझे हफ़्त इक़्लीमी (सात अजूबों/पूरी दुनिया) की शहंशाहियत भी अता कर दो तब भी मैं एक पल के लिए दीन–ए–मोहम्मदी से नहीं फिरूँगा।"

क़ैसर यह जवाब सुन कर तिलमिला उठता है। खुदाई का दावा करने वाला शहंशाह एक मामूली अरब के सामने बेबस हुआ जा रहा है। सिपाहियों को हुक्म देता है: "इसको क़ैदख़ाने में डाल दो, खाना–पानी बंद कर दो, तब अक़्ल ठिकाने आएगी। खाने की जगह ख़िंज़ीर का गोश्त और शराब दो, देखता हूँ कैसे इस्लाम पर बरक़रार रहता है।"

अब्दुल्लाह बिन हुज़ाफ़ा सहमी तीन दिन से क़ैदख़ाने में भूखे और प्यासे हैं मगर किसी भी क़ीमत पर हराम चीज़ों की तरफ़ हाथ तो दूर की बात, निगाह भी दराज़ (लम्बी) नहीं करते। सिपाही मायूस होकर क़ैसर के पास जाता है और अर्ज़ करता है: "हुज़ूर! इसको बाहर निकाल लिया जाए, नहीं तो ऐसे ही जान दे देगा।"

क़ैसर के हुक्म पर हज़रत अब्दुल्लाह को फिर दरबार में हाज़िर किया जाता है। क़ैसर पूछता है: "तुम को खाने और पीने से किस चीज़ ने रोका? तुम भूख से तड़प रहे थे।"

अब्दुल्लाह बिन हुज़ाफ़ा सहमी ने पुरसुकून लहजे में जवाब दिया: "जहाँ तक मजबूरी का तअल्लुक़ है तो शराब और ख़ंज़ीर का गोश्त मेरे लिए हलाल हो चुका था लेकिन मैंने पसंद नहीं किया कि इस्लाम के मामले में आपको ख़ुश होने या मज़ाक़ उड़ाने का मौक़ा दूँ।"

यह जवाब सुन कर क़ैसर को सख़्त मायूसी हुई और उसने गुस्से का इज़हार किया। आपको डराने के लिए तीरंदाज़ों को इशारा किया। तीरंदाज़ों ने हज़रत अब्दुल्लाह के चारों तरफ़ तीर बरसाए और क़ैसर यह कहता रहा: "इस दर्दनाक मौत से बचने का एक ही रास्ता है कि तुम ईसाईयत क़बूल कर लो।"

आप हर बार सख़्ती से इन्कार कर देते।

क़ैसर ने हुक्म दिया आग जलाई जाए, फिर तेल से भरी हुई एक बड़ी देग उस पर चढ़ाई गई। तेल जब ख़ौलने लगा तो दो मुस्लिम क़ैदियों को लाया गया और उसमें डाल दिया गया। पूरा दरबार एक हौलनाक चीख़ से लरज़ (काँप) उठा। देखते ही देखते गोश्त हड्डियों से जुदा होकर ख़त्म हो गया, सफ़ेद हड्डियाँ ऊपर तैरती हुई नज़र आईं।

क़ैसर के अंदाज़ से किबरियाई (घमंड) झलक रही थी और वह कहने लगा: "अगर तुम मेरी बात नहीं मानते हो तो इससे ज़्यादा दर्दनाक मौत तुम्हें दूँगा।"

जंजीरों में जकड़े हुए हज़रत अब्दुल्लाह, निढाल जिस्म की पूरी ताक़त को यकजा (इकट्ठा) करते हुए कहते हैं: "ऐ खुदा के दुश्मन! तुम दुनिया की कोई क़ीमत देकर भी मेरा ईमान नहीं ख़रीद सकते।"

क़ैसर हुक्म देता है: "ख़ौलते हुए तेल में अब्दुल्लाह को भी डाल दिया जाए।"

दफ़अतन (अचानक) हज़रत अब्दुल्लाह की आँखों से कुछ आँसू छलक पड़े। क़ैसर की आँखें चमक उठीं। उसने सोचा शायद मौत से डर गया, अब मेरी बात मान लेगा। कहा: "बरख़ुरदार! ईसाईयत क़बूल कर लो।"

आपने फिर जंजीरों के बोझ तले दबी हुई गर्दन को हिलाते हुए "नहीं" में इशारा किया।

क़ैसर बोला: "फिर यह आँसू क्यों?"

फ़रमाया: "मुझे ख़्याल आया कि एक बार इस देग में जाते ही जान चली जाएगी। मैं चाहता हूँ कि मेरे जिस्म में जितने रुएँ हैं, काश उतनी ही जानें होतीं और हर जान खुदा के रास्ते में ऐसे ही कुर्बान कर देता।" अल्लाहू अकबर! किस क़दर ईमान की मोहब्बत!

यह जवाब सुन कर सारे दरबारी सकते में आ गए। शहंशाह दंग रह गया, उसका गुस्सा जाता रहा, उसका जिस्म ढीला पड़ गया। वह अब्दुल्लाह के पास आया और बहुत नर्मी से कहा: "देखो! अगर तुम मेरे सर का बोसा (चूमना) ले लो तो मैं तुम्हें और तुम्हारे तमाम मुस्लिम साथी क़ैदियों को रिहा कर दूँगा।"

हज़रत अब्दुल्लाह बिन हुज़ाफ़ा सहमी ने उसकी जानिब देखा और सोचा कि किसी काफ़िर के सर को चूमना कोई ख़िलाफ़–ए–शरियत काम नहीं और मुसलमानों की जान निहायत अज़ीज़ थी, तो आपने उसके सर का बोसा लिया। क़ैसर ने बड़े एज़ाज़ व इकराम (आदर–सम्मान) के साथ आपके तमाम साथियों को आपके साथ रिहा कर दिया।

जब अब्दुल्लाह बिन हुज़ाफ़ा सहमी हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) के पास पहुँचे और आपको पूरी दास्तान सुनाई तो हज़रत उमर ने कहा: "हर मुसलमान पर हक़ है कि वह अब्दुल्लाह की पेशानी को बोसा दे और सबसे पहले यह हक़ मैं अदा करता हूँ।"

अमीरुल मोमिनीन हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) उठे और हज़रत अब्दुल्लाह बिन हुज़ाफ़ सहमी के सर को बोसा दिया।

बिलाशुबा दौर–ए–हाज़िर (वर्तमान समय) में ऐसे ईमान अफ़रोज़ वाक़्यात मुस्लिम नौजवानों के लिए अपने अंदर बहुत कुछ नसीहत रखते हैं।

आसान दीन मुश्किल ज़िन्दगी

मुहम्मद अरमग़ान बदायूनी नदवी

दीन–ए–इस्लाम का इम्तियाज़ यह है कि उसके अहकाम इंसानी तबीयत पर बिल्कुल भी बोझ नहीं हैं बल्कि वह ऐन इंसानी फ़ितरत के मुताबिक हैं। इस दीन के फ़राइज़ हों या सुनन व नवाफ़िल, उसके तमाम आमाल में इंसानी ज़रूरतों और उसके मिज़ाज व मज़ाक का भरपूर ख़्याल रखा गया है। न बहुत ज़्यादा जब्र से काम लिया गया है और न ही बे–मुहार छोड़ दिया गया है बल्कि एतिदाल व तवाज़ुन की एक ऐसी हसीन मिसाल पेश की गई है जिसकी नज़ीर दुनिया के किसी मज़हब और निज़ाम में नहीं पाई जाती।

कुरआन मजीद में साफ़ इरशाद हैः

"दीन में कोई ज़ोर–ज़बरदस्ती नहीं।"

एक दूसरी जगह इरशाद हैः

"अल्लाह तआला किसी को ताक़त से बढ़कर मुकल्लफ़ नहीं करता।"

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) भी मुतअद्दिद मौक़ों पर हज़रात–ए–सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम को कसरत से इस बात की तलक़ीन फ़रमाते थे किः

"दीन आसान है।"

इस दीन पर अमल करना इंतिहाई आसान है। नमाज़ जो इस दीन का दूसरा बुनियादी रुक्न है, उसके लिए तहारत और वुज़ू शर्त है लेकिन अगर पानी का इस्तेमाल सेहत के लिए मुज़िर हो या पानी दस्तयाब न हो तो मिट्टी से तयम्मुम का हुक्म है और सफ़र में इसी फ़र्ज़ नमाज़ के मुतअल्लिक़ क़सर का हुक्म है ताकि इंसान दुश्वारी में न पड़े। अगर कोई ऐसा माजूर है जो खड़े होकर नमाज़ पढ़ने से क़ासिर है तो बैठकर और लेटकर भी नमाज़ पढ़ने का हुक्म है। इसी तरह रोज़ा एक जिस्मानी मशक्कत वाली इबादत है, इसीलिए सफ़र में रुख़्सत दी गई और बीमारों के लिए भी रुख़्सत अता की गई।

सीरत में बाज़ ऐसे वाक़्यात भी मिलते हैं जिनसे मालूम होता है कि अगर कोई इंसान ज़ाती जज़्बा–ए–इबादत की बिना पर गुलू से काम ले तो वह दीन के मिज़ाज से हटी हुई बात है। बाज़ सहाबा ने दीन पर सख़्ती से अमल करने के लिए क़सम खाई, मसलन किसी ने कहा कि मैं ज़िंदगी भर शादी नहीं करूँगा, किसी ने कहा कि मैं ज़िंदगी भर रोज़ा रखूँगा और किसी ने कहा कि मैं ज़िंदगी भर इबादत में मशगूल रहूँगा। यह सुनकर आप (स0अ0व0) सख़्त बरहम हुए और उन्हें एतिदाल की तालीम दी और सबसे बढ़कर अपना नमूना–ए–ज़िंदगी उनके सामने रखा और उस पर अमल करने की तरग़ीब दी।

उम्मुल मोमिनीन हज़रत ज़ैनब बिन्त जह्श (रज़ियल्लाहु अन्हा) के मुतअल्लिक़ आता है कि उन्होंने अपने घर में एक रस्सी बाँध ली थी और जब उनको नवाफ़िल पढ़ने के दौरान नींद का ग़लबा होता तो रस्सी को अपनी चोटी से बाँध लेती थीं ताकि नींद न आ सके। आप (स0अ0व0) ने इस अमल को पसंद नहीं फ़रमाया और उसको हटवा दिया। इसीलिए आप (स0अ0व0) का यह भी इरशाद है कि उतना ही अमल करो जितनी तुम्हारे अंदर हिम्मत हो।

इस दीन के इंसानी फ़ितरत के ऐन मुताबिक होने की खुली दलील यह भी है कि बाज़ औक़ात इंसान शैतान के बहकावे में आ जाता है और गुनाहों का मुर्तकिब हो जाता है, लेकिन उस पर भी अल्लाह ने मायूसी से क़तअन मना फ़रमाया है और तौबा का दरवाज़ा मौत के वक़्त से पहले पहले तक खुला रखा है। इस दीन के दीन–ए–रहमत होने की यह भी एक खुली मिसाल है कि अगर आदमी ख़ुदा–न–ख़ास्ता किसी हराम अमल में मुब्तिला हो जाए तो भी उसके लिए माफ़ी के दरवाज़े खुले हैं।

यह दीन फ़ी–नफ़्सिही आसान दीन और बाइस–ए–रहमत है और उसकी तबलीग़ व इशाअत में भी इसी बात की तलक़ीन की गई है कि यह पहलू निगाहों से ओझल न हो। हुक्म है कि लोगों की एक–एक बात पर मुआख़ज़ा न हो। आप (स0अ0व0) सहाबा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) को हिदायत करते थे कि

लोगों के लिए आसानियाँ पैदा करने की कोशिश करो और तुर्श–मिज़ाजी से एहतियात करो। लहजे में नरमी पैदा करने और अख़्लाक़ व किरदार के तवाज़ुन की बेशुमार मिसालें सीरत–ए–नबवी (स0अ0व0) में हमें नज़र आती हैं। यहाँ तक कि एक अराबी ने मस्जिद में पेशाब कर दिया तो आप (स0अ0व0) ने सहाबा को रोका कि उसको सख़्त–सुस्त न कहें और फ़रमाया कि तुम लोग आसानी पैदा करने वाले बनाकर भेजे गए हो न कि सख़्ती करने वाले बनाकर।

अगर देखा जाए तो दीन की यह आसानी हमें हर शोबे में नज़र आती है और कहीं भी तकल्लुफ़ का ऐसा शाइबा नज़र नहीं आता जिससे इंसानी समाज में एक दूरी पैदा होने का अंदेशा हो। हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने जिस सादगी के साथ शादी की, वह यक़ीनन एक मिसाल है कि दीन के अंदर निकाह जैसा बाबरकत अमल किस क़दर आसान बनाया गया है।

बड़े अफ़सोस की बात है कि आज हम लोगों ने दीन को ख़ानों में तक़सीम कर दिया है और उस पर अमल करना उतना ही मुश्किल बना लिया है जितना कि यह दीन आसान है। वह इबादात जो इंसान की रूहानी तस्कीन का एक ज़रिया हैं और उनमें भी ख़ास तौर पर नमाज़ जिसको हदीस शरीफ़ में अहल–ए–ईमान की मेराज क़रार दिया गया है और अल्लाह के नबी (स0अ0व0) ने अपनी आँखों की ठंडक फ़रमाया है, अफ़सोस की बात है कि उसकी रूह को भी लोगों ने मसालिक के इख़्तिलाफ़ात में कुचल कर रख दिया है।

नमाज़ हक़ीक़त में रूह को बालीदगी बख़्शने का ज़रिया थी और मसालिक का जो इख़्तिलाफ़ नक़ल किया जाता है वह तरजीह और अमल के लिए था, न कि तबलीग़ और ऐन–ए–दीन समझने के लिए। हैरत की बात है कि एक बड़ी तादाद नमाज़ के अंदर खुशू व खुज़ू और उसके बुनियादी अरकान की अदायगी से सरफ़–ए–नज़र महज़ ज़ाहिरी बहसों में उलझी हुई नज़र आती है और उसके लिए दस्त–ब–गरेबाँ होना भी उसके लिए कोई मयूब और बड़ी बात नहीं है।

इसी तरह निकाह जैसा बाबरकत अमल जो एक मुस्तक़िल इबादत है और उसको ईमान की तकमील का ज़रिया क़रार दिया गया है, उसमें भी मुसलमानों ने सबसे ज़्यादा तजावुज़ से काम लिया है और इस सिलसिले में शरीअत की तमाम तालीमात को पस–ए–पुश्त रखकर अपनी मनमानी को तरजीह दी है। शादी–ब्याह में पानी की तरह पैसा बहाना और बेहयाई के तमाम कामों को बड़ी खुशदिली से अंजाम देना लगता है कि मुसलमानों का शेवा बन चुका है। शादी–ब्याह के मौक़े पर दीन की थोड़ी बहुत रमक़ बस उसी वक़्त नज़र आती है जब क़ाज़ी साहब निकाह पढ़ा रहे हों, ताहम इस अमल में भी न जाने कितनी रसूमात व खुराफ़ात दर आई हैं। जबकि नबी (स0अ0व0) का साफ़ इरशाद है कि सबसे बाबरकत निकाह वह है जिसमें सबसे कम ख़र्च हो।

इसी तरह दीन में तालीम को इंसानी तरक़्क़ी की बुनियाद बताया गया था और मख़्लूक़ को ख़ालिक़ से जोड़ने का ज़रिया क़रार दिया गया था और यह कहा गया था कि इंसानियत की फ़लाह व बहबूद तालीम के ज़रिये मुमकिन है लेकिन उस तालीम के ज़रिये जो हमें अपने परवरदिगार से क़रीब करती हो, मगर आज तालीम को भी हमने एक तिजारत बना लिया है और उसको दीन से एक ख़ारिज चीज़ समझ लिया है।

मौजूदा दौर में दीन और हमारी ज़िंदगियों के दरमियान जो ख़ला और एक अदम–ए–तवाज़ुन नज़र आता है, उसकी बुनियादी वुजूहात में यह बात शामिल है कि आज मुसलमानों का ईमान उस दर्जा कामिल व मुकम्मल नहीं जिसके अंदर क़नाअत, सब्र, शुक्र और तवक्कुल जैसी बातिनी सिफ़ात हों जो इंसान को दर्जा–ए–कमाल तक पहुँचाती हैं और इंसानी समाज में उसे एक मुमताज़ मुक़ाम अता करती हैं।

इस वक़्त मुसलमानों का सबसे बड़ा अलमिया यह है कि वह एक बे–मक़सद ज़िंदगी का शिकार हैं, वक़्त का ज़ियाअ है और लहव व लअब में मस्त हैं, दुनिया हासिल करने की रेस में सरपट दौड़ रहे हैं और ज़्यादा से ज़्यादा सहूलत भरी और वसाइल से लबरेज़ ज़िंदगी गुज़ारने के ख़्वाहाँ हैं, चाहे इस सबके लिए उन्हें दीन के अहकाम को अपनी मर्ज़ी के मुताबिक ही क्यों न मोड़ना पड़े। यही वजह है कि आज हमें दीन की जो शक्ल किताब व सुन्नत और सीरत–ए–नबवी (स0अ0व0) में नज़र आती है, वही नमूना इंसानी समाज में अन्का नज़र आता है।

ज़रूरत है कि अस्ल दीन की तरफ़ लौटने की कोशिश की जाए, दीन के मिज़ाज को समझा जाए और इस मज़हब के मुतअल्लिक़ पूरी कुव्वत के साथ यह साबित किया जाए कि तनहा यही मज़हब इंसानियत के लिए बाइस–ए–रहमत व नजात है।

मलफ़ूज़ात-दाई-ए-इस्लाम

निज़ाम-ए-आलम का बाहमी रब्त:

फ़रमाया: "इंसानी आज़ा में से हर जुज़ एक दूसरे से जुड़ा हुआ है, अगरचे उनमें से एक का काम दूसरा नहीं कर सकता। मसलन: नाक का काम आँख नहीं कर सकती, या मुँह का काम नाक नहीं कर सकती। इसी तरह से दुनिया का हाल है कि यहाँ हर एक दूसरे से इंतिज़ामी लिहाज़ से जुड़ा हुआ है, अगरचे हर एक की मुस्तक़िल एक अलग हैसियत है। मसलन: कपड़े की तैयारी में और उसको हम तक आने में न जाने कितने लोगों के हाथ लगे और कितने लोगों ने मेहनत की। या बहुत मामूली मिसाल यह ले ली जाए कि नदवा में तलबा के टिफ़िन में जो खाना बच जाता है तो उसको हिफ़ाज़त से रखने के बजाय नाली में फेंक देते हैं। अब अगर फेंकने वाले ने गलत फ़िक्र के साथ फेंका है तो उस पर ७९-८९ फ़ीसद असर पड़ेगा और अगर गलत फ़िक्र से नहीं बल्कि यूँ ही फेंका है तो उसका असर ख़ुद उस पर ४ फ़ीसद असर पड़ेगा, नदवा पर २९ फ़ीसद, लखनऊ में एक फ़ीसद और पूरे आलम में आधा फ़ीसद। इसी पर इस बात को भी क़यास कर लीजिए कि रूहानी लिहाज़ से हमारा माहौल जितना अच्छा होगा उतना ही सुकून होगा और जितना बुरा होगा उतनी ही परेशानी बढ़ेगी, इस लिए कि हर शख़्स की बुराई के असरात दूसरों तक पहुँचते हैं।"

दाएँ हाथ की अफ़ज़लियत:

फ़रमाया: "जिस तरह दायाँ हाथ बाएँ हाथ से अफ़ज़ल व बरतर है, उसी तरह सूरज चाँद से बढ़ा हुआ है। इसी लिए हुज़ूर (स०अ०व०) ने कुफ़्फ़ार-ए-मक्का की बाबत अपने चचा अबू तालिब से जब फ़ैसला कुन बात कही थी तो फ़रमाया था:

وْ وَضَعُوا الشَّمْسَ فِي يَمِينِي وَالْقَمَرَ فِي يَسَارِي عَلَى أَنْ أَتْرُكَ هٰذَا الْأَمْرَ حَتّٰى يُظْهِرَهُ اللّٰهُ أَوْ أَهْلِكَ فِيهِ مَا تَرَكْتُهُ

"अगर वह मेरे दाएँ हाथ में सूरज और मेरे बाएँ हाथ में चाँद रख दें, इस शर्त पर कि मैं इस काम को छोड़ दूँ यहाँ तक कि अल्लाह इसे ग़ालिब कर दे या मैं इसमें हलाक हो जाऊँ, तो भी मैं इसे हरगिज़ नहीं छोड़ूँगा।"

मुहब्बत-ए-इलाही की शर्त:

फ़रमाया: "उस वक़्त तक अल्लाह से मुहब्बत कामिल दर्जा नहीं हो सकती जब तक कि अल्लाह के दुश्मनों से बुग्ज़ व अदावत कामिल दर्जा न हो।"

सीरत के एक अहम वाक़े में तलबा-ए-मदारिस के लिए रहनुमाई:

फ़रमाया: "हुज़ूर (स०अ०व०) के सामने वलीद ने सरदारान-ए-कुरैश की तरफ़ से यह बातें पेश कीं कि अगर आपको माल व मुल्क या सरदारी वग़ैरह मतलूब है तो हम आपकी यह ख़्वाहिश ज़रूर पूरी करेंगे। उसकी तमाम मआरूज़ात पेश करने के बाद हुज़ूर (स०अ०व०) ने फ़रमाया: "तुमको जो कुछ कहना था, क्या तुम कह चुके?" उसने कहा: 'हाँ!' इसके बाद हुज़ूर (स०अ०व०) ने क़ुरआन की आयात पेश कीं और इस्लाम का पैग़ाम दिया।

हज़रत मौलाना अली मियाँ नदवी (रहमतुल्लाह अलैहि) सीरत के इस ख़ास वाक़ये को बयान करके मदारिस के तलबा से मुख़ातिब होकर फ़रमाते थे कि हमें ख़ूब सोच लेना चाहिए कि मदारिस में पढ़ते वक़्त हमारी क्या नियत है? अगर इसके ज़रिये हमारा मक़सद माल व सरदारी या इज़्ज़त व शोहरत हासिल करना है तो याद रखें! ऐसी सूरत में हमारी यह सब मेहनतें बेकार और अकारत हैं।"

ज़ब्त-ओ-पेशकश: मुहम्मद अज़ीमुद्दीन नदवी

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 06 ❁ June 2026 ❁ Volume: 18

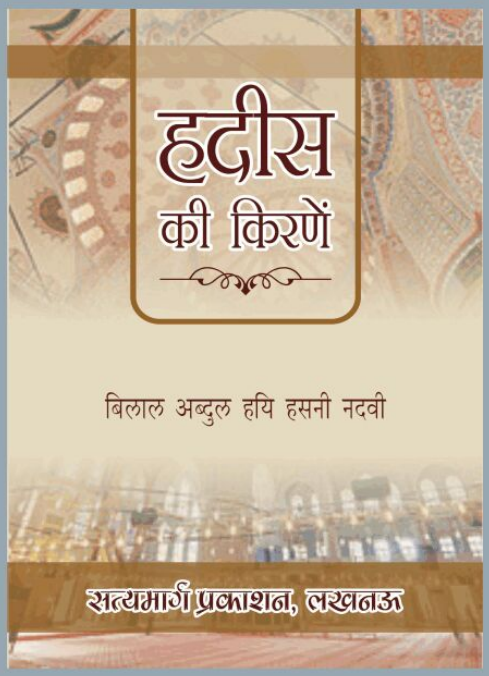

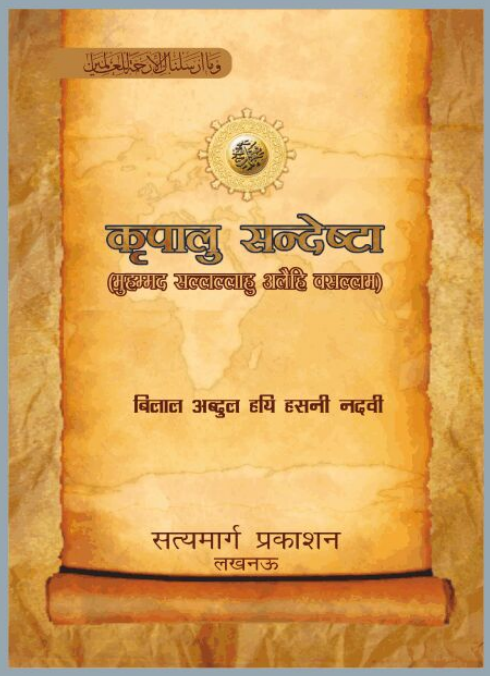

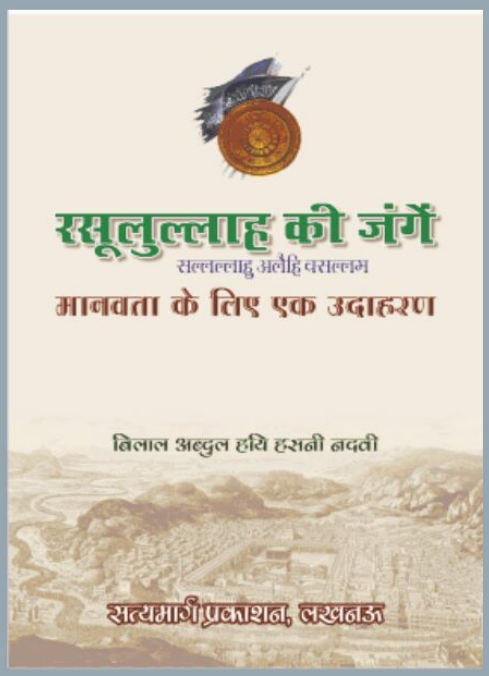

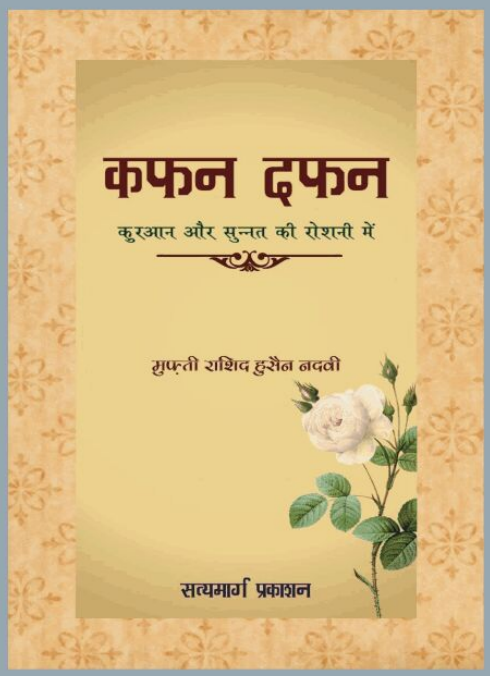

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.